सगुन पंछी

लक्ष्मीनारायण लाल

निवेदन

हमारे देश में किसी समय गृहस्थश्रम को जीवन धर्म साधन या साधना का मूल केन्द्र माना गया था। इसकी ऊँचा सम्मान मिला था क्योंकि स्त्री, पुरुष दोनों के लिए यह मुक्ति–मार्ग था। यह विषयभोग के लिए था। इतना प्रगाढ़ सम्पूर्ण भोग कि मुक्ति मिल जाए। इसका एक महत्त्वपूर्ण मर्म था। उस घर–गृहस्थी का सम्बन्ध जितना ही अपने भीतर था, परस्पर था, उतना ही उसका सम्बन्ध बाहर से था। वहाँ संचय का एक भाग परायों के लिए भी होता था। फलतः वहाँ अपनों, आत्मीयों के प्रति स्वाभाविक स्नेह के अलावा मानव कल्याण की इच्छा की एक विशेष हृदय–वृत्ति पैदा होती थी। हमने तब यह कभी नहीं माना कि घर–गृहस्थी केवल अपने स्वार्थ का स्थान है। गृहस्थी अपने प्रभुत्व की किलेबन्दी है।

पर जिस दिनयह जीवन–मूल्य–भूमि टूटी, घर–गृहस्थी अपने स्वार्थ और प्रभुत्व का दुर्ग बनी, उसी समय से स्त्री–पुरुष के सम्बन्धों में तनाव आया। दोनों एक–दूसरे के प्रतिपक्षी और विरोधी बने। और एक अजब तरह का नफरत–निन्दा–प्रतिस्पर्धा का भाव नगर–जीवन से लेकर लोकजीवन तक फैला। लोक–चेतना ने इसी सच्चाई को तोता–मैना की कथा कहा है। जंगल में आँधी, वर्षा ओर दुर्दिन की एक शाम है। मैना (स्त्री) आराम से अपने घोंसले में बैठी है। तोता (पुरुष) आता है। मैना से कहता है–मैना ! आज की रात मुझे यहाँ बिता लेने दो। कल सुबह यहाँ से चला जाऊँगा। मैना दो टूक जवाब देती है कि मुझे पुरुष जाति पर जरा भी विश्वास नहीं, मेहरबानी कर आप यहाँ से तशरीफ ले जाइए। तोता के पुरुष–अहंकार पर निश्चय ही चोट लगती है। वह प्रतिवाद करता है कि वाह ! स्त्री, जो स्वयं ऐसी विश्वासघातिनी है, निठुर और प्रपंची है, वह पुरुष के खिलाफ ऐसी बेबुनियाद बात कहे ! अपने–अपने पक्ष की वकालत में दोनों की कथाएँ शुरू होती हैं। मेना की कथा यह साबित करती है कि पुरुष बुरा है। तोता की कथा यह दिखाती है कि स्त्री बुरी है। इस तरह वादी–प्रतिवादी कथाएँ कहने–सुनने में सारी रात बीत जाती है। कोई पक्ष हार नहीं मानता। इतना ही नहीं, परस्पर विश्वास भी नहीं करता। सुबह होती है। एक हंस आता है। बुजुर्ग पंच की हैसियत से दोनों की शादी करा देता है।

इस लोक–कथा के स्त्री–पुरुष शक्ति के दोनों प्रतीक पंछी कथा के पात्र हैं। मैंने उन्नीस सौ आठ में तोता मैना को नट और नटी के रूप में प्रस्तुत कर 'नाटक तोता–मैना' लिखा। उस नाटक में स्वभावतः एक ही कथा चलती है, जिसका एक अंक मैना का पक्ष है तो दूसरा अंक उसके विपरीत तोता के पक्ष का ज्वलन्त उदाहरण बनता है, और अन्त शादी से होता है जिसे हंस कराता है। गान होता है :

तोता मैना की हुई जैसे मुराद पूरी
ईश्वर आप सबकी करे वैसे मुराद पूरी
यहाँ न पुरुष बड़ा यहाँ न नारि बड़ी
दोनों एक रथ की धुरी.....

गान तो हुआ। उपदेश भी हुआ। लोक–कथा का सुखद अनत भी हुआ। दर्शकों को आशीष और मंगल कामनाएँ भी मिलीं, कि जैसे तोता–मैना की मुराद पूरी हुई, ईश्वर आप सबकी मुराद पूरी करे। तो हमारी मुराद, इच्छा, लक्ष्य क्या है ? शादी हो जाना ? चलिए, शादी हो गई। बाराती विदा हुए। स्त्री–पुरुष पत्नी और पति के रूप में गाँठ जोड़े घर के अन्दर

आए। गृहस्थी जमने को हुई। दुल्हन देखती है कि पति घर में ही नहीं रहता, पर घर का स्वामी वही है। पत्नी उससे कोई कैफियत माँगे तो घर में झगड़ा, कलह और तनाव। पत्नी अपने घर (बंगले) के पिछवाड़े बाग और फुलवारी के साथ अपने को जोड़कर स्वयं को और अपनी उस घर–गृहस्थी को सजीव रखना चाहती है। इस प्रयत्न में वह स्वयं टूटने लगती है। यह नाट्य कथा है, 'नाटक तोता–मैना' के बाद 'रातरानी' की। रातरानी की कुन्तल, स्त्री, अपने उस घर में अपने पति जयदेव में, पुरुष में एक चीज ढूँढ़कर पाती है, कि यदि अहंकार की प्रतिष्ठा, व्यक्ति की स्वच्छन्दता, उसी की सुख–सुविधा पर ही स्त्री–पुरुष का मिलन आधारित हो तो वह मिलन और टूटन बिल्कुल ही व्यक्ति की इच्छा पर निर्भर करेगा। इसी की परिणति यह होगी कि जिस घर में, स्त्री–पुरुष के सम्बन्धों के बीच व्यक्ति विशेष की सुख–स्वच्छन्दता का ही आधार होगा वहाँ पति–पत्नी की विषय सम्मति भी बिल्कुल निजी होगी। सम्मति ही तब स्त्री–पुरुष के सम्बन्धों का आधार होगी। इसमें आनन्द नहीं मिल सकता। इसमें उपजती है ईर्ष्या। पैदा होता है कलह। उसमें कुछ निर्मित नहीं होता। व्यर्थ ही में सब टूटता है। पुरुष स्त्री पर सन्देह ही नहीं, अविश्वास करता है। वह कहता है– मैंने तुम जैसी बहुत औरतें देखी है। स्त्री जवाब देती है– यही तो मेरी करुणा है। तुमने बहुत औरतें देखी हैं, मैंने सिर्फ एक पुरुष देखा है। पुरुष और गहरी चोट करता है–सच ? आओ चलो, यह मेरे हाथ पर हाथ रखकर कहो ! पत्नी पूछती है– सप्तपदी के वक्त अग्नि के सामने तुम्हारे हाथ में मेरा हाथ रखना क्या काफी नहीं था ? पति दो–टूक जवाब देता है– नहीं। स्त्री को, पुरुष के उस अविश्वास के पीछे जो मर्म है, उसका बोध पहले ही हो चुका है। वह अनुभव कर चुकी है– पुरुष की समस्या अधिकार की है। तभी वह सब कुछ बॉटकर देखता है–स्त्री को अपने पुरुष से बाँटकर। पत्नी को नहीं, दहेज में मिली हुई महज एक औरत के रूप में देखता है। वह समझती है– तुम मेरे पति हो, पर तुम अपने–आपको महज मेरा स्वामी समझते हो। पति को पूरा विश्वास है कि वह सब ठीक समझता है।

अब इस प्रश्न को पति–पत्नी सम्बन्धों से दूर शुद्ध प्रेम के धरातल पर देखें।

'सूर्यमुख' नाटक में पौराणिक पृष्ठभूमि पर प्रदुम्न और वेनुरती, इन दो प्रेमी–प्रेमिका का साक्षात्कार है। यहाँ स्त्री–पुरुष शुद्ध प्रेम–सम्बन्धों की भूमि पर खड़े हैं। पर प्रेम उन्हें जितना ही जोड़ता है, परस्पर के सन्देह, उन दोनों के बीच कृष्ण की छाया, उनके व्यक्तित्व की स्मृति उन्हें उतना ही तोड़ रही है। वहाँ न घर है, न कोई गृहस्थी है, पर उस मिलन मूल्य की तलाश है जहाँ उनका प्रेम उन्हें मुक्त कर दे। पर सवाल यह है कि यहाँ उनके सम्बन्धों के तनाव के भीतर ही डूबकर उन्हें एक दूसरे को पाना है। जितना बड़ा, गहरा प्रेम है दोनों स्त्री–पुरुष का, उतना ही गहरा और बड़ा दोनों में सम्बन्ध–बोध का तनाव है। ऐसा लगता है, अगर उतना गहरा, बड़ा सन्देह न होता तो वह सूर्यमुख प्रेम भी न होता। अगर उतना तीव्र–तीखा तनाव न होता तो दोनों ने जिस चीज, जिस अनुभूति को प्राप्त किया, वह सम्भव न होता। उस सन्देहभरी तनावपूर्ण स्थिति में वेनुरती ओर प्रदुम्न का जो प्रेम पला है उसने जैसे सारी प्रकृति को, प्रकृति के सारे तर्कों को ही बदल दिया है। द्वारिका से दूर, वेनुरती से अलग, प्रदुम्न जिन सूनी पहाड़ियों में आत्मनिर्वासित है वहाँ बिना बादल के हर क्षण बिजली चमकती है, बादल गरजते हैं, बिना मेघ के वर्षा होती है और शत–शत द्वारिका वहाँ हर क्षण डूबती है।

प्रदुम्न ने वेनुरती से प्रेम कर पूरी द्वारिका को अपने खिलाफ कर लिया है। वह खुद मानो अपने विरोध में खड़ा है। वह वेनुरती के लिए अपने सम्बन्धों के पक्ष में सबसे लड़ता है। अपने–आप से लड़ता है। हारता है। वेनुरती से लड़ता है,

वहाँ और पराजय मिलती है। वह वेनुरती के चरित्र के खिलाफ विष उगलता है। वेनुरती उसके खिलाफ चलती है। दोनों में जैसे कोई साम्य नहीं। मिलन का कोई बिन्दु नहीं। पर वही बिन्दु तो उनकी तलाश है और वही उनका प्रेम–सम्बन्ध है। उसी में से उन्हें वह गहन अनुभूति मिलती है–'हम दोनों में दोनों था। अब और प्रश्न मत करो मुझसे। अन्तःपुर में, उस पहिले दिन जब तुम्हें देखा था, समर्पित हो गई थी, यद्यपि मैं लज्जित थी। जिस दिन तुम्हारे अंक में सोई थी, यद्यपि घृणा से भर गई थी, फिर भी तुम्हें प्यार किया था। उस दिन मैं क्रोध से पागल थी, जब तूने जरा के सामने मुझे अपमानित किया, पर आज मैं केवल पिया हूँ, लज्जित नहीं।' पर स्त्री–पुरुष के उस मिलन, उस प्राप्ति में भी एक सनातन प्रश्न है। घायल वेनुरती, क्षतविक्षत प्रदुम्न दोनों ने एक मुख से वही प्रश्न किया था–हे घायल ईश्वर! हम तुणे समझना चाहते हैं, क्या थी तेरी इच्छा हमारे माध्यम से ? क्यों था हमारा प्रेम इतना आश्चर्यजनक और कठोर ? फिर भी इतना कोमल। और हमारी प्रतीति इस विनाश के साथ ही क्यों हुई ? इतने गहरे जल में हम प्यासे क्यों थे ?

हिन्दु समाज एक स्थायी युद्ध की अवस्था में रहा है। क्योंकि देश में यही एक समाज नहीं है। यह विभिन्न, विपरीत आचार–व्यवहारों वाले समाजों से घिरा हुआ है। उनके आक्रमणों से अपनी सत्ता की रक्षा करने के लिए इसे सतत सतर्क रहना पड़ा है। इसलिए इस समाज ने अपने चारों ओर एक मानसिक, नैतिक और धार्मिक दुर्ग बनाया और उसी में निवास करने लगा। तभी अपने–पराये, स्त्री–पुरुष, पति–पत्नी, भेद और विरोध के बारे में यह इतना सचेत रहा है। इसीलिए व्यक्तिगत स्वाधीनता का दमन जितना अधिक यहाँ हुआ है, उतना शायद और कहीं नहीं। मैं उन समाजों की बात नहीं कर रहा जहाँ कभी कोई स्वतन्त्रता थी ही नहीं। इसका नतीजा सबसे ज्यादा स्त्री–पुरुष सम्बन्ध–बोध पर पड़ा। बिना किसी रिश्ते में बाँधे स्वतन्त्र रूप से स्त्री–पुरुष को देखा ही नहीं गया। स्त्री स्त्री नहीं है, वह खुद अपने–आप में, अपने लिए कुछ नहीं है। वह किसी और की माँ है, बहन है, बुआ है, मौसी है। यही स्थिति पुरुष की है। और रिश्तों–सम्बन्धों की हालत यह है कि जैसे कहीं 'करफ्यू' लगा दिया गया हो या लग गया हो।

स्त्री–पुरुष सम्बन्धों का यही 'करफ्यू' नाटक है। शहर में उत्पात और उपद्रव हो गया है और अचानक 'करफ्यू' लग गया है। यह उत्पात और उपद्रव और फलस्वरूप करफ्यू एक तरह से हमारे जीवन के भीतर का उपद्रव और उसके दमन का, करफ्यू का, प्रतिफलन है। उसी की अभिव्यक्ति है। चूँकि हमारा आपसी जीवन, चाहे वह प्रेम हो या विवाह हो या कोई कर्म हो, सम्बन्धों के उसी करफ्यू के भीतर रुँधा, बँधा और यहाँ तक कि उसी में कैद है। हम यों भी कह सकते हैं कि चूँकि हमारा व्यक्तिगत जीवन, बौद्धिक, शारीरिक और मानसिक करफ्यू में, हदबन्दी में, पाबन्दी में, वर्जनाओं में घिरकर जिया जाता है, उसी नाते हम अपनी जीवनी शक्ति को अभिव्यक्त करने के लिए समाज में, घर में, पास–पड़ोस में अपराध कर बैठते हैं। उपद्रव और उत्पात करते हैं और इस तरह से अपने सम्बन्धों के भीतर लगे 'करफ्यू' को तोड़ना चाहते हैं। इस तरह हम अमानवीय, अस्वाभाविक होकर ही अपने सहज मानव को, मानवीय सम्बन्धों को प्रकट करने के लिए मजबूर होते हैं। कविता नामक पत्नी पर–पुरुष संजय से कहती है कि क्या संयोग है, इस करफ्यू के कारण आपसे भेंट हो गई। चाहा कितनी बार था कि आपसे मिलूँ, आपकी प्रशंसा करूँ लेकिन आज हो पाया है और वह भी अकस्मात्। मनीषा एक स्वतन्त्र युवती एक पुरुष गौतम से यह जानना चाहती है कि आपने मुझे जब पहली बार देखा तो मेरे बारे में क्या सोचा। पुरुष बताता है कि यह उसकी आदत है, प्रकृति है, कि देखते ही वह एक 'आइडिया' बना लेता है और उसे बदलता नहीं। जरूरत नहीं महसूस होती।

और सम्बन्धों का यह 'करफ्यू' जब टूटता है तब पुरुष महसूस करता है कि हम सब अपने–अपने सत्य के छोटे–छोटे घरौंदे बनाकर उसी में रहने के इस हद तक आदी हो चुके हैं कि दूसरे का सत्य हमारी पकड़ से बाहर हो जाता है। हम समझ नहीं पाते और समझना हम चाहते नहीं। लेकिन खासकर स्त्री–पुरुष के सम्बन्ध–जगत में एक क्षण ऐसा आता है जब तेज आंधी में रेत का घरौंदा बालू बनकर बिखर जाता है। मन में तब शंका पैदा होती है कि कहीं दूसरे का सत्य ही तो वास्तविक नहीं ? फिर भी, आधुनिक पुरुष या स्त्री को आदतन एकदम विश्वास नहीं हो पाता और वह 'शायद' कहकर टालना चाहता है। पर सम्बन्धों का करफ्यू टूटने के बाद मनीषा स्त्री प्रश्न करती है कि क्या छोटे–छोटे व्यक्तिगत सत्यों से ऊपर एक बड़ा सामाजिक सत्य नहीं होता ? उसे न मानना या अस्वीकार करना जीवन को नकारना नहीं ?

पहले समय–समय पर, किसी न किसी उपलक्ष्य से हमारे घरों में स्त्री–पुरुष के सम्बन्ध–बोध में दूसरों के अधिकार स्वीकार किए गए हैं, चाहे इससे समय, सम्मान, आत्म–सुविधा या धन की क्षति भी क्यों न हुई हो। कल्याण को ध्यान में रखा गया, केवल स्वार्थ को नहीं। स्वार्थ व्यक्तिगत है या नहीं ? स्त्री–पुरुष, पति–पत्नी के बीच आज क्या कुछ व्यक्तिगत है ? यही कथा प्रश्न है 'व्यक्तिगत' नाटक का। जो मनुष्य घर बसाकर अपनी इच्छानुसार रहता है उसको हमारे यहाँ गृहस्थ नहीं माना गया। यहाँ कर्म का मतलब स्वार्थ साधन नहीं, बल्कि समाज के प्रति कर्तव्य–पालन है। गृह–धर्म–पालन हो या स्त्री–पुरुष–सम्बन्ध हो, इसे तपस्या माना गया है। पर उसकी जगह जब से भोग, स्वार्थ आया, हमारे घरों में, प्रेम या स्त्री–पुरुष–सम्बन्धों में तब से 'वह' अनुभव करने लगी– 'मैं देख रही हूँ एक सम्पूर्ण आइना था, जो टूटकर असंख्य टुकड़ों में बिखर गया। अब उससे हर टुकड़े में वही 'मैं' दिखता है और अपने–आपको सम्पूर्ण कहता है। पर दूसरे को, मुझको, टुकड़ों में बांटकर देखता है। मैं धर्मपत्नी, प्रेमिका, पार्टनर, नौकर, मां, 'इंटेलेक्चुअल' खिलौना, 'बाइफ ऑफ पोलीगेमस'..... एक पूरा दर्पण था, जो टूटकर अनगिनत तरह–तरह के टुकड़ों में बिखर गया।' स्त्री–पुरुष के सम्बन्धों में आज गुण क्या है ? यह खेल है ? इस खेल में कोई गुण नही ? नहीं ? तो गुण क्या होता है ? कहाँ से आता है ? अपने सहचरों के साथ जिस बन्धन में बँधना होता है, उसी से फिर मधुरतम मानवीय गुणों का विकास होता है ? और यही है व्यक्तिगत स्त्री–पुरुष के बीच, जहाँ वे दोनों एक होते हैं।

सारे संकटों और तनावों के बावजूद स्त्री–पुरुष को एक होना पड़ता है। तभी कोई काम होता है। पर यह तनाव, संकट, विरोध सनातन है क्या ?

प्रकृति और पुरुष तो सनातन हैं। ये दो शक्तियां हैं। एक जल है तो दूसरा ताप है। एक धरती है तो दूसरा सूरज है। बिना एक के दूसरे का अस्तित्व नहीं। पर दोनों सर्वथा दो हैं। दोनों का दो बने रहना ही उनकी अपनी अस्मिता है। तभी इन दोनों के योग से तीसरे का सृजन और विकास होगा। उदाहरण के लिए, एक पौधा है। उसे जितनी आवश्यकता माटी की है, जल की है, उतनी ही जरूरत है उसे सूरज के ताप की। धूप की। दोनों में तनाव चिरन्तन नहीं है। तनाव तो देन है उन दोनों के सहज–धर्मा न होने की।

तोता–मैना में इतना विरोध है; तनाव है, पर लोक–मानस या उसकी सहज चेतना फिर भी उन दोनों की शादी कराके यह दिखाती है कि कुछ भी हो, दोनों को कहीं मिलना ही है। जिन्दगी सारे मतभेदों, विरोधों के बावजूद चलेगी। प्रकृति और पुरुष अलग–अलग शक्तियाँ हैं पर जहाँ वे मिल रही हैं, वहीं सृजन है और यही है सगुन। यही है 'सगुन

पंछी', तोता–मैना से आगे चलकर, बल्कि स्त्री पुरुष सम्बन्धों, चरित्रों के सागर तट पर पहुँचकर दोनों सगुन पंछी दिखे। इन्होंने अपना ही नाटय रूप और रंगमंच–प्रकार सृजन कर डाला। वास्तव में ये सगुन हैं।

लोक–जीवन में सगुन का भाव है शुभ। निर्गुण वाला सगुण नहीं। पर नहीं, भूल हो रही है। जो सगुण है वही तो सगुन है।

–लक्ष्मीनारायण लाल

निर्देशक की ओर से

एक दिन 'धर्मयुग' में लक्ष्मीनारायण लाल जी का एक लेख पढ़ने को मिला। तोता–मैना की पारंपरिक लोक कथा को लेकर कभी इन्होंने एक नाटक लिखा था, जिसका नाम था 'नाटक तोता–मैना'। वह नाटक तब सत्यदेव दुबे ने बम्बई में 'थियेटर यूनिट' से प्रस्तुत किया था। उसके बाद, उस नाटक का कोई अता–पता नहीं था। बाद में पता चला, लाल ने खुद उस नाटक को कहीं छिपा दिया। 'धर्मयुग' के उस लेख में पढ़ने को मिला कि तोता–मैना का अन्त में विवाह हो गया। पर विवाह के बाद क्या हुआ, असली नाटक तो वही है। उसी बात को लेख में एक नये सिरे से उठाते हुए लाल ने लिखा था कि स्त्री–पुरुष के सम्बन्धों में जो संघर्ष है, जो लड़ाई–झगड़े, मन–मुटाव के तत्व हैं, वही तो इस बात के साक्षी हैं कि दोनों दो जीवित शक्तियाँ हैं। शक्ति का काम ही है लड़ना, क्योंकि स्त्री–पुरुष के सन्दर्भ में दोनों एक–दूसरे के पूरक हैं। जब पूरक तत्त्व में गड़बड़ी आती है तब संघर्षों के अलावा और कोई चारा नहीं। पर लाल ने जो अत्यन्त महत्त्वपूर्ण, आकर्षक, मौलिक बात कही, वह यह कि यही संघर्ष ही तो 'सगुन' है। संघर्ष सगुन है और इसी विश्वास से उन्होंने नाटक 'तोता–मैना' को नये सिरे से दुबारा, नया लिखा और 'सगुन पंछी' नाम दिया, इस बात से मैं बहुत ही आकृष्ट हुआ।

उन दिनों मैं लखनऊ, कानपुर क्षेत्र में रंगमंच–प्रदर्शन कार्य कर रहा था। कानपुर में ही डॉ0 लाल से 'सगुन पंछी' की पाण्डुलिपि मंगाकर मुझे इसे पढ़ने का सौभाग्य मिला।

'सगुन पंछी' को पढ़कर मुझे जितना ही महत्त्वपूर्ण इसका कथ्य लगा, उतना ही आकर्षक मुझे इसका 'फार्म' लगा। अब तक मुझे इस बात का पता न था कि लाल की इतनी पहुँच संगीत में भी है। और वह स्वयं संगीत का इतना कलात्मक प्रयोग और व्यवहार अपनी रचना में इतनी सहजता से कर सकते हैं।

'फार्म' मेरे लिए एक चुनौती थी। खासकर उसे प्रदर्शन के धरातल पर सजीव प्रस्तुत करना। मैं जन्म से कश्मीरी, नाट्य शिक्षा संस्कार से दिल्ली के नेशनल स्कूल ऑफ ड्रामा का–और अपनी रंग प्रकृति में 'सगुन पंछी' शुद्ध अवध का–ठेठ पूरब के लोक रंगमंच के तत्त्वों को अपने में समाहित किए हुए।

इसे बार–बार पढ़ने से इसका 'फार्म' सामने पूर्णतः प्रकट नहीं हो पा रहा था। इसका नाटक समझ में आता था, पर दृश्यत्व–बोध नहीं हो पा रहा था। फिर मैंने उसका गायन शुरू किया। ज्यों–ज्यों उसका संगीत फैला, त्यों–त्यों उसका फार्म मेरे सामने सजीव होने लगा। तब एक महत्त्वपूर्ण बात मेरे हाथ लगी। लाल ने 'सगुन पंछी' के रूप में कोई पारम्परिक ज्यों का त्यों लोक नाटक नहीं लिखा, वरन् उन्होंने अपने लोक नाटक, लोक रंगमंच के किन्हीं जीवन्त नाट्य व्यवहारों, तत्त्वों, परम्पराओं और रूढ़ियों का इस्तेमाल कर एक नया नाटक निर्मित किया है। एक रचना की है अपनी लोक परम्पराओं के तत्त्वों के कलात्मक योग से। और यह रचना, कथा, अभिनय, संगीत, घटना–क्रम, व्यवहार और संवाद, इन सभी स्तरों, आयामों से है। इसमें नाटककार जितना आत्मपरक है, उतना ही वस्तुपरक। लोक रंग–तत्त्वों के प्रति वह जितना भावुक है, शायद उससे कहीं ज्यादा वह उनसे तटस्थ और निस्संग है। वह दूर से नजदीक है। और नजदीक से वस्तुपरक है, तभी इतना कलात्मक इस्तेमाल यहाँ इस रचना में सम्भव है। बल्कि मैंने यहाँ तक अनुभव किया कि यह

रचना तभी हुई है जब इसके रचनाकार ने अपने लोक–तत्त्व को अपने समय, काल और सन्दर्भों में देखा है–और देखकर पाया है 'सगुन पंछी'।

अब तक मैं अन्य नाटकों के निर्देशन, प्रस्तुतीकरण कर प्रायः उन्हें मंच पर 'इंटरप्रेत' करता था। उसमें मैं अपना योग देता था–अपनी मंच–सज्जा, प्रकाश योजना, अभिनय–तत्त्वों से–पर पहली बार मैंने इस नाटक को प्रस्तुत कर इससे कुछ पाया है। इसने उलटकर मुझे दिया है–जब कि अब तक मैं यह सोचता आ रहा था कि निर्देशक नाटक को देता है। देना ही पाना है–यही है मेरे निर्देशक का सगुन।

स्त्री–पुरुष के सम्बन्धों का यह धरातल, यह प्रसंग, यह दर्शन मेरे लिए बिल्कुल नया था। इस नये का मंच पर प्रस्तुत करना, प्रकट करना, दर्शकों तक पहुँचाना ही मेरा वह कार्य था, जिसका आनन्द मैं कभी नहीं भूल पाऊँगा।

अपने इस कार्य में मैंने आधुनिक रंग–तत्त्वों से भी सहायता ली। और मैं इस प्रक्रिया से इस नतीजे पर आया कि यदि नाटक अपनी मिट्टी का है, सच्ची कृति है, तो उसके प्रस्तुतीकरण में आधुनिक–प्राचीन, लोक और शास्त्रीय का अन्तर कहीं सहज ही मिट जाता है।

तभी मैं यह कहना चाहूँगा कि 'सगुन पंछी' में मेरा अपना फार्म क्या था, उसे मैं अपनी तरफ से कोई नाम नहीं देना चाहता। यह आपका काम है।

काश ! लाल जैसा कोई एक और नाटककार हिन्दी को मिल जाता.....!

2 जुलाई, 1976 –वंशी कौल

'सगुन पंछी' का प्रथम प्रदर्शन 11 फरवरी, 1976 को
मर्चेण्ट्स चेम्बर हाल, कानपुर में, 'अभिनव' द्वारा हुआ।

भूमिका में

राजा	राकेश तनेजा
रानी	अंजली मित्तर
गंगा एवं मैना	श्यामली मित्तर
पंचम एवं तोता	हेमेन्द्र भाटिया
मन्त्री	दीप सक्सेना
मसखरा	अखिल मिश्रा
पंछी एवं मुसाफिर	तरुन
पंछी एवं प्रेत	कपूर सोनकर
पंछी एवं सहेली	विनीता कैपिहन
नीलकंठ एवं वृद्ध	प्रबोध झींगन

श्रेय

संगीत	गुलाम दस्तगीर
नृत्य	श्रीमती रोहिणी भाटे
मुखौटे	श्यामली मित्तर एवं हेमेन्द्र भाटिया
गायक	गुलाम दस्तगीर, श्रीमती दीपश्री
	मोहन एवं सम्पूर्ण पात्रगण
वादक	अशोक, रघुवीर, मुन्ने खाँ
निर्माण एवं निर्देशन	वंशी कौली

दिल्ली में सगुन पंछी का पहला प्रदर्शन 'लिटिल थियेटर ग्रुप' द्वारा फाइन आर्ट्स थियेटर में, सुब्बाराव के निर्देशन में 27 सितम्बर, 1976 को हुआ।

भूमिका में

नीलकंठ	ज्ञानेश मिश्रा
मसखरा	सत्यप्रकाश
तोता–पंचम	राजीव गोयल
मैना–गंगा	गीता शर्मा
राजा	दर्शन सहेल
रानी	नीरू भार्गव
मन्त्री	मोहम्मद अयूब
वृद्ध	जैमिनी कुमार
प्रेत	रमेश कपूर
पहली स्त्री	नीरू भार्गव
दूसरी स्त्री	ममता
पंछी (कोरस)	सुरेश भादद्वाज, अखिलेश खन्ना, मुश्ताक, विजय खन्ना, प्रेमचंद, नीरू भार्गव, ममता, फरहत
संगीत और नृत्य रचना	पंडित शिवप्रसाद
संगीतकार	तारा और साथी
मंच–विधान	सुब्बाराव
सह–निर्देशन	जैमिनी कुमार

पात्र :

जंगल के पंछी

नीलकंठ

तोता

मैना

मसखरा

चरित्र :

राजा

रानी

पंचम

गंगा

वृद्ध

प्रेत

मन्त्री

दो औरतें, आदि

पूर्व रंग

(नाटक के पात्र विविध पंछियों के रूप में गाते हैं।)

सगुन दे चिरई चुनगुन कुआं पनिहारी हो
सगुन दे माता सुहागिन जेहि के सगुन सुभ हो।

नीलकंठ : नारि सुहागिन जल घट लावै।
पुरुष अंधेरे दीप जलावै।।
सनमुख धेनु पियावै बाछा।
मंगल करन सगुन है आछा।।

सब : सगुन दे चिरई चुनगुन कुआँ पनिहारी हो।
सगुन दे माई सुहागिन जेहि के सगुन सुभ हो।।

नीलकंठ : इक पैठी जल भीतर रटत पियास पियास
एक बैठा जल ऊपर नैनन पियत हुलास।।

सब : सगुन दे चिरई–सबके सगुन सुभ हो

(मसखरा आता है जिसकी बहुत लम्बी दाढ़ी है।
हाथ में टेढ़ा–मेढ़ा डंडा लिए है।)

दया भाई भगवान की जो मरा हमारा बाप
भाई लोग मृदंग बजा मैं दूँ तबले पर थाप।
ता ता धिन ताता
ता ता धिन ताता
मेरे बाप का क्या जाता
ता ता धिन ताता
मेरे बाप से मेरा क्या नाता
ता ता धिन ताता
ता ता धिन ताता
सबको अलग–अलग कर दूँ
औरत को मरद कर दूँ
नहीं, औरत–मर्द को अलग कर दूँ
बोलो भाई, इसमें मेरा क्या जाता
ता ता धिन ताता
ता ता धिन ताता

हाँ मेरा है क्या जाता

ता ता धिन ताता.....।

(इस बोल पर सारे नाचते रहते हैं।)

मसखरा : सुनो मेरे प्यारो

सुनो मेरे प्यारो

किस्सा तोता मैना

दिल में विचारो।

सब : सबका अशीस है

सबको सलाम है

खेल अब शुरू है सबको प्रणाम है

मसखरा : कथा है पुरानी

नया है जमाना

जी गई नानी

मर गया नाना

खेल बेहतरी है

जरा आजमाना।

सब : **(नाचते हुए)** यह फिल्म नहीं थेटर

यह फिल्म नहीं थेटर

यह फिल्म नहीं थेटर

यह थेटर है सबका

(सब एक बिन्दु पर रुक जाते हैं।)

मैना : मैं मैना मैना मैना।

तोता : मैं तोता तोता तोता।

(कई बार नृत्यवत गतियों से आ–आकर कहते हैं।)

मसखरा : हैअ हैअ हैअ

पुरु पुरु पुरु

झगड़ा इनका शुरू शुरू शुरू।

मैना : मैं मैना मैना मैना।

तोता : मैं तोता तोता तोता।

मैना : तो क्या ?

तोता : तो क्या ?

मैना : मैं हूँ मैना अपने घर की रानी हूँ मैं।

तोता : मैं हूँ तोता अपने घर का राजा हूँ मैं।

मैना : मैं हूँ मैना अपने घर की रानी हूँ मैं।

तोता : मैं हूँ तोता अपने घर का राजा हूँ मैं।

मैना : तो ?

तोता : जंगल में आयी आंधी।

टूटा मकान मेरा

तूफान ले गया सब

सारा जहान मेरा।

मैना : तो क्या करूँ मैं।

तोता : मैं अतिथि तुम्हारा कैसे क्या बताऊँ

इस जंगल में यही आज मैं रात बिताऊँ।

मैना : तू पुरुष जाति मैं नारि

नहीं तुम पर मेरा विश्वास

चल उड़ जा यहाँ से

छोड़ दे यहाँ रहने की आस।

तोता : भला नारी बोले ऐसी बात

करेजा मोरे खून बहे

(सब गाते हैं।)

तोता : जो खुद है निर्दयी विश्वासघाती

एक छोड़ दूसरे संग चली जाती

मैना : भला पुरुष बोले ऐसी बात

करेजा मोरे खून बहे।

(सब गाते हैं।)

मसखरा : मामला गरम है

अब खेल शुरू कर दूँ मुझे क्या शरम है।

देख री मैना

यह चरित्र–कथा है नारि जाति की।

मैना : यह चरित्र–कथा है

पुरुष जाति की।

मसखरा : कंचनपुर के एक नगर में

अंगध्वज राजा रहता था।

नीलकंठ : कंचनपुर के उसी राज में

पंचमबीर किसान रहता था।

मसखरा : उसकी रानी चंद्रमुखी थी।

नीलकंठ : किसान की औरत बड़ी नेक थी

बड़ी सुन्दरी

जैसा किसान वैसी ही उसकी पत्नी।

मसखरा : राजा–रानी में बड़ा प्रेम था।

नीलकंठ : किसान–किसानी में बड़ा विश्वास था।

मसखरा : ऐ चिड़ी का गुलाम

मत बोल बीच में।

नीलकंठ : अच्छा बिना सींग–पूछ के.....।

मसखरा : कया कहा बिना सींग–पूछ के ? वह होगा तेरा दादा।

लकड़दादा। नादा। सादा। खादा।

आकर सम्हालो मरी दाढ़ी। मैं देखता हूँ इसकी नाड़ी।

चलाऊँ इसकी गाड़ी। मारूँ वह लात कि जाय गिरे बंगाल की खाड़ी।

(दो लोग उसकी लम्बी दाढ़ी को अपने

हाथों पर रखकर चलते हैं। शेष लोग गाते हैं।)

हजारा मोरे कान का मोती

मोती मेरा कीज पड़ा है

ले जमुना जल धोती

अगले पहर मैंने मोती गँवाया

पिछले पहर खड़ी रोती

मोती के बदले मोती मँगा दो

मोती बिना नहीं सोती

मोती मेरा जो कोई ला दे

लाख रूपया देती

हजारा मोरे कान का मोती।

पहला अंक

पहला दृश्य

(संगीत समाप्त होते–होते दायीं ओर तोता जो अब किसान बन गया है और मैना गंगा, दोनों दिखते हैं। किसान पंचमबीर अपने सिर पर पगड़ी बाँध रहा है जिसका दूसरा सिरा युवती गंगा थामे हुए है। वह गा रही है–)

एक साथ मन उपजी जो विधि पुरवई
ए हो राजानगर तक जइहो पियरी ले आवो।

(किसान गाता है–)

ए हो राजानगर बसै दूर कोसवन को चले
घर ही में पियरी रंगइबो पियरी रंग पहिरो।

(दोनों गाते हैं। इधर बायीं ओर राजा खड़ा है। रानी कोप किए बैठी है। पीछे दृश्य बने पंछी लोग खड़े हैं।)

रानी : हजारा मोरे कान का मोती।

(पंछी गाकर दुहराते हैं।)

पंछी : हजारा मोरे कान का मोती।

रानी : मैं तब तक अन्न–पानी छुऊँगी नहीं, जब तक मेरे कान का वह हजारा मोती नहीं मिलेगा।

राजा : मैं दूसरा बनवा दूँगा।

रानी : मैं नहीं लूँगी।

राजा : रानी जिद न करो।

(समानान्तर दूसरी ओर)

गंगा : तुम हो तो सब कुछ है।

पंचम : तुम मेरे साफे का कलंगी हो।

गंगा : मैं नदी तुम गंगा।

पंचम : तू दीया मैं पतंगा।

गंगा : मन चंगा तो कठौती में गंगा।

(दूसरी ओर)

राजा : रानी, तुम्हारा मन कैसा है ?

रानी : उस हजारा मोती बिन जिऊँगी नहीं।

राजा : पूरे राज–भर में ढूँढ़ा गया। राज्य के सारे गुप्तचरों को हजारा मोती के इस तरह गायब होने का रहस्य का पता नहीं चला।

रानी : उस रहस्य का पता तुम्हें लगाना होगा।

राजा : मुझे ? राज–काज में क्या इसके लिए इतना समय मेरे पास है ?

रानी : तो मेरी इच्दा की कोई कीमत नहीं ?

राजा : तुम्हें अपने राजा की कोई इज्जत नहीं ?

(उधर पंचम अपनी पगड़ी बाँध चुकता है।
गंगा गाती है–)

अचरन सुरुज मनैइबै
तबैं अपने राजा कैं पइबै

(दोनों गाते हैं–)

मोरे महराजा के बड़ी–बड़ी अँखिया
अँखियन कजरा लगैइबै तबे अपने राजा.....

(दोनों गाते हुए चले जाते हैं। पीछे खड़े पंछीगण
वहीं गाते हुए दायीं ओर जा दृश्य हो जाते हैं।)

राजा : मेरी रानी की अगर यही जिद है, तो मैं जाता हूँ। भेष बदलकर पूरे राज में घूमूँगा और उस हजारा मोती का पता लगाऊँगा। राजा का धर्म है.....

(राजा जाता है। पंछीगण गाते हैं–)

दुःख सुःख प्रजा जो लखै सुत सम पालै वाहि
धर्म न्याय सब को करै राजा कहिए ताहि।
निशि दिन प्रजा जो रखे नीति–अनीति विचार
जो जाको अपराध हे तोसों कर निरधार।।
जा हित सों पुत्रहि लखै जो हित सो परिवार
ताहि भाव परजहिं लखै सो राजा सरदार।

(रानी जाती है। सारे पंछी वहीं सोकर मानो
सीढ़ियाँ बन जाते हैं। एक वृद्ध आता है। दूसरी ओर से भेष बदले हुए राजा आता है।)

राजा : क्या दुःख है तुम्हें ? राजा से न्याय माँगने आए हो ?
किसने क्या किया ? बोलोगे नहीं तो न्याय कैसे मिलेगा ?

वृद्ध : मैं बोलूँगा भी तो मेरी कौन सुनेगा ?

राजा : राजा।

वृद्ध : मुझे राजा के पास जाने को कहाँ मिलेगा ? मेरी कोई नहीं सुनेगा।

राजा : सुनो, धीरज धरो।

वृद्ध : क्या कहा ?

राजा : धीरज।

वृद्ध : धीरज क्या होता है ?

मसखरा : धीरज क्या होता है ? अरे धीरज माने धीरज है। अरे रो नहीं, शान्त हो जा भाई!

वृद्ध : हमेशा शान्त हो तो रहा हूँ मैं। कौन हो तुम ?

राजा : तुम्हारी ही तरह प्रजा हूँ। इस कंचनपुर राज्य का।

वृद्ध : जिसका राजा बुद्धि से अन्धा अंगध्वज है ?

राजा : (अलग) यह कहना क्या चाहता है ? यह मुझे पहचान तो नहीं लेगा ? यह दुःखी है, अशान्त है। क्या मैं भी स्वीकार कर लूँ कि मैं भी दुःखी और अशान्त हूँ ? वह भी अपनी रानी के कारण। (रुककर) अपने को स्वीकार कर लूँ ? नहीं, स्वीकृति में ही सारा उपद्रव है।

मसखरा : ओह, तभी हममें से कोई भी अपने को स्वीकार नहीं करता। यह बात है ! स्वीकार कर यह राजा कैसे रह सकता है ?

राजा : कल्पना करो, राजा तुम्हारे सामने खड़ा है।

वृद्ध : मेरे राजा का अपमान मत करो। मेरा राजा महाविलासी है। वह अपने रंगभवन में सारी रात रंगरेलियाँ करता है। दिन–भर सोता है।

राजा : फिर भी तुम राजा के पास जाना चाहते हो ?

वृद्ध : कुछ कहना है अभी। इसी वक्त।

राजा : विश्वास करो, मेरी भुजाओं में इतना बल है कि मैं तुम्हारी कोई भी सहायता कर सकता हूँ।

वृद्ध : क्या ?

राजा : हाँ।

वृद्ध : केवल शरीर–बल से वह सहायता नहीं हो सकती। उसके लिए आत्म–बल चाहिए।

राजा : राजा के पास आत्म–बल नहीं है ?

वृद्ध : आत्म–बल खोकर ही कोई राजा बनता है, तभी तो यह सबसे डरता है। (रुककर) बता दूँ ? धोखा तो नहीं दोगे ?

राजा : नहीं।

वृद्ध : प्रतिज्ञा करो, जो कुछ मैं तुमसे बता रहा हूँ, कभी किसी से नहीं कहोगे। वचन दो।

राजा : वचन देता हूँ–तुम्हारी बताई हुई बात किसी से नहीं कहूँगा।

वृद्ध : यदि किसी से भी कहोगे तो उसी क्षण पत्थर हो जाओगे।

राजा : नहीं, ऐसा कभी नहीं होगा।

वृद्ध : तो सुनो, अभी कुछ ही देर बाद, रात को तीसरा पहर लगते ही राजा अंगध्वज का एक प्रेत आकर मार डालेगा।

राजा : राजा अंगध्वज की मृत्यु प्रेतात्मा से होगी, ऐसा क्यों ? राजा ने क्या किया उस प्रेतात्मा का ?

वृद्ध : वह सामने देखो, पर्वत की उस चोटी पर, जहाँ से अभी वह तारा टूटा है, वहीं से वह प्रेतात्मा नीचे उतरकर इस महल में सोते हुए राजा को दबोच लेगा और एक ही घूँट में उसके शरीर का सारा रक्त पा जाएगा। फिर उसके अस्थिपंजर को घसीटता हुआ उसी चोटी पर ले जाएगा।

राजा : क्यों ? ऐसा क्यों ?

वृद्ध : यह अंगध्वज राजा अपने पिछले जन्म में साहूकार था। इसका नाम था–मणिसेन। उसकी स्त्री का नाम था–केसर। जो बड़ी सुन्दरी थी। मणिसेन अपनी सौदागरी में कहीं दूर देश को गया था और उसकी स्त्री केसर घर में अकेली थी। घर का एक सेवक था, अठारह साल का एक ब्राह्मण बालक। रतनजोति नाम था। केसर उस रतनजेति को अपनी पाप–वासना का साधन बनाना चाहती थी। रतनजोति ने इसका विरोध किया। और इसकी भयानक प्रतिक्रिया में केसर ने पति द्वारा उस अबोध सच्चरित्र बालक से जो बदला लिया, वह बेहद निर्मम था। रात के तीसरे पहर केसर ने अपने पति मणिसेन के हाथों जीवित रतनजोति को आंगन में गड़वा दिया। वही रतनजोति अब प्रेत हुआ है। और आज रात राजा से अपनी मौत का बदला लेगा नासमझी से दूसरों के कहने में जो आ जाता है, वह बुरा फल भोगता है।

मसखरा : (दुहराता है) नासमझी से दूसरों के कहने में जो आ जाता है वह उसका बुरा फल भोगता है।

(वृद्ध जाता है। पंछीगण गाते हैं।)

बुरा फल भोगता है
नासमझी से दूसरों के कहने में जो आता है
बुरा फल भोगता है।
खुद में जहर घोलता है
नासमझी से दूसरों के कहने में जो आता है।
बुरा फल भोगता है।

नीलकंठ : रोशनी पंछी है
जल पर बहती है
तुम्हारी पलकों के तले धूप छाँव बुनती है

सब : अपनी रोशनी बुझाता है
नासमझी से दूसरों के कहने में जो आता है।
बुरा फल भोगता है।

नीलकंठ : भई रात
आँखें पलकों में सो जाती हैं

और इंतजार करती हैं सुबह का

सब : जो यह नहीं जानता

बुरा फल भोगता है

नासमझी से दूसरों के कहने में जो आता है।

बुरा फल भोगता है।

(गाते हुए सब राजा के आसपास दृश्यवत्

खड़े हो जाते हैं।)

राजा : क्या मैं दूसरों के कहने का विश्वास करूँ ? क्यों नहीं, मैंने विश्वास किया अपनी रानी का। उसके कहने से उसका हजारा मोती ढूँढ़ने निकला। भेष बदलकर मैं पता लगाने चला।

मसखरा : देखो राजा की लीला, प्रजा का दुःख–दर्द जानने के लिए यह कभी राजमहल से बाहर नहीं निकला। निकला कब जब अपने ऊपर विपत्ति आई–वो भी अपनी रानी के हजारा मोती के लिए। लेकिन बाहर आकर इसे मालूम हुआ कि इसकी प्रजा भी दुःखी है, बस यह घबरा गया सच्चाई को देखकर। और फिर जब इसकी जान पर बन आयी तो देखो कैसा दुम दबा के भागा वापस राजमहल में। हजारा मोती की खोज धरी की धरी रह गई।

(गा पड़ता हैं।)

ऐसा होता है ऐसा होता है

राजा कै राज रोज रे लोगो परिजा कै नहिं आस

राजा सोवै राजमहल माँ परजा देखे उदास

ऐसा होता है ऐसा होता है।

राजा : (पुकारता है) द्वारपाल। नगरपाल !

(सब पंछी तुरन्त राजा के वहीं अधिकारी के रूप

में सावधान हो तैनात हो जाते हैं।)

राजा : सावधान ! कोई राजमहल के भीतर पाँव नहीं रखे।

एक पंछी : जो आज्ञा महाराज।

राजा : भीतर से चारों ओर बन्द कर लो।

नीलकंठ : अब किसी की हिम्मत नहीं जो अन्दर आये।

(चारों ओर से बन्द करने का अभिनय)

राजा : कोई आता दिखे तो बन्दूक से दाग दो।

कोई कदम बढ़ाये तो तलवार से काट दो।

(राजा जाता है। पंछी कवायद करते हुए

पहरा देने लगते हैं।)

तेज चलो सावधान

राजा राजा परेशान
बिल्ली बोले म्याऊँ म्याऊँ
चूहा कहता खाँऊँ खाँऊँ
किसको किसकी है पहचान
तेज चलो सावधान.....।

(राजा आता है। पंछी बन्दूक से दागने लगते हैं।
राजा कहता है, 'यह क्या करते हो ?')

नीलकंठ : यही आपकी आज्ञा थी।

राजा : बुद्धि और समझ भी कोई चीज होती है।

नीलकंठ : हाँ भाई, कोई चीज होती है।

मसखरा : अपने ही बिछाए जाल में जब फँसते हैं तब पता चलता है। अभी खुद ही आज्ञा दी कि कोई आता दिखे तो बन्दूक से दाग दो। भाई ! कोई में आखिर राजा भी तो शामिल रहता है।

(पंछी आपस में सलाह करने लगते हैं और राजा
के सामने क्षमा–प्रार्थी होते हैं। राजा परेशान और चिन्तित चला जाता हैं।)

मसखरा : बेचारे सिपाही ! सब परेशान हैं कि अब राजा उनको नौकरी से निकाल देगा। सलाह कर रहे हैं आपस में, अब क्या किया जाए ? राजा से सब माफी माँग रहे हैं। जैसे किस्सा हो उस दुमकटे लंगूर का जिसे न दीखे पास का और ना अतिदूर का।

(उसी तरह पंछी फिर पहरा देने लगते हैं। रानी
आती दिखती है, पंछी तलवार चलाने लगते हैं। राजा दौड़ा आता है।
रानी को बचाकर ले जाता है।)

नीलकंठ : आखिर बुद्धि और समझ भी कोई चीज होती है।

सब पंछी : हाँ भाई, कोई चीज होती है।

(नीलकंठ के सामने सब हाथ जोड़कर खड़े
होते हैं।)

नीलकंठ : जीवन बुद्धि से बड़ा है। जीवन बुद्धि के पार है। क्षुद्र से जब भी हम विराट को समझने चलेंगे तो क्षुद्र अपनी सीमाएँ उस पर थोप देगा। जीवन को जीकर जाना जा सकता है, सोचकर नहीं। बुद्धि कहती है दो और दो मिलकर चार होने ही चाहिए। जिन्दगी में दो और दो कभी चार नहीं होते। मुर्दा चीजों को जोड़ों तो दो और दो चार होती हैं। पर दो प्रेमियों को गिनो, नापो, वे बढ़कर हजार गुना हो जाते हैं। कैसा हिसाब है !

मसखरा : हाँ भाई, कैसा हिसाब है ! बड़ीऊँची–ऊँची बातें मत करो। नीचे आओ। कुछ गाओ। मेरी दाढ़ी उठाओं।

(नीलकंठ हँस पड़ता है। सब हँसने लगते हैं।

भयभीत राजा दिखाई पड़ता है। सब चुप हो

जाते हैं।)

राजा : वह आ रहा है।

नीलकंठ : कौन ?

राजा : वह आ रहा है।

(सारे पंछी आँख फाड़–फाड़कर देखते हैं,

कहीं कुछ भी उन्हें नहीं दिखाई पड़ता।)

राजा : रोको उसे। बन्दूक चलाओ। बन्दूक। गोली। तलवार चलाओ।

(पंछीगण शून्य में बन्दूक और तलवार चलाने का

अभिनय करते हैं। प्रेत केवल राजा को दिखता है। राजा मूर्तिवत् खड़ा रह गया है।)

प्रेत : ओह ! तुम मुझे पहचानते हो ? अपने–आपको भी पहचानते हो ? क्या करते हो ? क्यों करते हो ? क्या खाते हो ? क्या पहनते हो ? क्या चाहते हो ? देखते क्या

हो ? कभी देखा भी है ?

राजा : हाँ, देख रहा हूँ।

प्रेत : तुम्हारे और देखने के बीच एक काला ऊँचा पहाड़ है जिसकी चोटियों पर गिद्ध बैठे हैं। अँधेरी घाटियों में विषधर जीव–जन्तु, जीवभक्षी, पशु घूमते हैं। तुम नहीं देखते। सिर्फ तुम्हारी आँखें देखती हैं। तुम दूसरों के कहने से देखते हो। दूसरों के कहने से करते हो। दूसरे तुम्हारे नहीं हैं। तुम अपने नहींहो।

मसखरा : अरे, बड़ी ऊँची–ऊँची बातें कर रहा है। किसी ऊँचे आदमी का प्रेत है।

प्रेत : रानी तुम्हारी नहीं है। तुम उसके नहीं हो। हर वक्त डरे हुए हो, स्त्री तुम्हें छोड़कर कहीं और न चली जाय। सोचते हो, उसके स्वामी हो ? गुलाम हो।

राजा : नहीं।

प्रेत : खबरदार मुझसे जो आँखें मिलाई। तुम किसी को नहीं पहचान सकते। कुछ देखा तो नहीं ?

राजा : चले जाओ।

प्रेत : कहाँ ?

राजा : हट जाओ।

प्रेत : देख रहे हो, मैं काँप रहा हूँ। क्योंकि तू भयभीत काँप रहा है। तू अन्धा है तभी मैं प्रेत हूँ। अब तक मैं बदला लेने तुम्हारे पास क्यों नहीं आया ? कभी सोचा इसे ? अब तक मैं कहाँ था ?

राजा : चीखो नहीं।

प्रेत : चाहता हूँ, सोया हुआ सारा राजमहल जाग जाय। तेरी सारी सेना, सारे पहरेदार, अंगरक्षक जाग जायँ।

राजा : कहाँ हो मेरे सारे अंगरक्षक ? सेनापति, मन्त्री, द्वारपाल–दुर्गपाल ?

प्रेत : अपनी रानी को भी पुकारो। शायद वह आ जाय।

राजा : मेरे पास आने की कोशिश कत करना।

(कटार निकाल लेता है।)

प्रेत : मुझसे डरते हो ?

राजा : कौन ?

प्रेत : कोई नहीं। मैं अकेला। तुम अकेले। तूने जिन्दा रतनजोति को जमीन में गाड़ना शुरू किया था, तेरी स्त्री ने नफरत से मुझपर थूका था। (दिखाता है) यह देख उस घृणा का निशान। इसे देखा तो राजमहल में भूकम्प आ जाएगा। यह घाव मेरा है। यही हूँ मैं। यही है मेरी ताकत।

राजा : तू नहीं जानता मेरी ताकत ?

प्रेत : वही मैं हूँ।

राजा : क्या ?

प्रेत : मैं ?

राजा : किसका प्रेत है ?

प्रेत : तेरा।

राजा : बकवास बन्द करो।

मसखरा : वैसे बकवास दोनों कर रहे हैं।

(अचानक रानी आती है। प्रेत अदृश्य हो जाता है।

राजा : कहाँ गया ? कहाँ है ? कहाँ है तू ?

रानी : (सभय आश्चर्य से) क्या है ? किसे ढूँढ़ रहे हैं ? कौन आया था यहाँ ? क्या है ? मुझे इस तरह क्यों देख रहे हैं ? क्या हुआ ? बताइए, क्या है ? यहाँ कौन आया था ?

मसखरा : अब सम्हालो।

जागो।

पानी में लगी आग,

भागो भागो।

राजा : नहीं। यहाँ कुछ भी नहीं हुआ। यहाँ कोई नहीं आया।

केसर.....।

रानी : यह केसर नाम आपके होंठों पर कहाँ से आया ?

राजा : केसर किसी चिड़िया का नाम हो सकता है।

रानी : बहकाने की कोशिश मत कीजिए।

राजा : केसर किसी भी स्त्री का नाम हो सकता है।

रानी : मैं भी एक स्त्री हूँ।

राजा : तुम्हारा भी नाम केसर हो सकता हैं

रानी : मेरा नाम रानी रूपमती है।

राजा : हम वही नहीं हैं जो वर्तमान हैं या सामने दीख पड़ते हैं। हमारी जड़ जीवन की इस सनातन धरती में बहुत गहरी है।

मसखरा : जब आदमी घबड़ा जाता है तब ऊँची–ऊँची बातें करने लगता है। मिसाल के तौर पर देखिए न !

रानी : अभी इस समय की बात पूछ रही हूँ।

राजा : कोई और बात करो।

रानी : वहाँ क्या हुआ है ?

राजा : कोई जरूरी है तुम्हें सारी बात बताई जाय ?

रानी : तुम राजा ही नहीं, मेरे पति हो। मैं तुम्हारी प्रजा भी हूँ और पत्नी भी। जो तुम हो, उसी का प्रकाश मैं हूँ।

मसखरा : रानी मुँहजोर राजा गरम है। एक को न लाज न दूसरे को शरम है।

राजा : क्या जानना चाहती हो ?

रानी : वही जो तुम जानते हो और मुझसे छिपा रहे हो।

राजा : अगर वह बताने लायक नहीं हो ?

रानी : मैं आदि से अन्त तक सुनना चाहती हूँ।

राजा : आदि मैं हूँ। अन्त तुम हो।

रानी : और बीच में ?

राजा : तुम्हारे कान से उस तरह हजारा मोती का गायब होना कितना रहस्यमय था। तुम्हारे हठ के कारण मैं रूप बदलकर न जाता पता लगाने, न.....

रानी : आगे.....।

राजा : बस और कुछ नहीं।

रानी : चीखते क्यों हो ! नहीं बताना चाहते न बताओ।

राजा : तो सुनो, नहीं बताना चाहता।

रानी : तो सुनो, मैं जानकर रहूँगी, नहीं तो प्राण दे दूँगी।

राजा : अगर वह बताने लायक नहीं हो।

रानी : ऐसा कुछ नहीं हो सकता।

राजा : उसका वचन है–यदि मैं उस बात को किसी से कह दूँगा तो उसी क्षण पत्थर हो जाऊँगा। मैंने उसे वचन दिया है।

रानी : वचन मुझे भी दिया है।

राजा : कैसा ? कब ?

मसखरा : वाह–वाह ! क्या जोड़ी बनाई है भगवान ने। एक का मुँह दूसरे का कान। एक की आँखें तो दूसरे की जबान।

राजा : हठ मत करो। उस बात के बताने में हमारा नाश है।

रानी : जो सच्चाई है, उसी के छिपाने में सर्वनाश है।

राजा : मैंने जो देखा है, वह भयानक है।

रानी : जब तक वह रहस्य बनाकर रखा जाएगा, तभी तक भयानक लगेगा।

राजा : मैंने जो देखा.....।

रानी : वह भ्रम हो सकता है। कोई बुरा स्वप्न हो सकता है।

राजा : पूर्वजन्म में.....।

रानी : पूर्वजन्म को देख नहीं सकते, उसे जी नहीं सकते, बता नहीं सकते, तभी पूर्वजन्म की कहानी गढ़ते हैं।

राजा : वह सच है। मैंने उसे अपनी आँखों से देखा। मैंने भोगा है। साक्षी हूँ।

रानी : साक्षी होते तो इस तरह चीखते नहीं। शांत हो जाते। तुम्हारी मौन भाषा मैं समझ जाती। सब रहस्यमय बनाकर मुझे भी अशान्त किया।

राजा : मैं बताकर पत्थर हो जाऊँ, यह चाहती हो ?

रानी : बताकर कोई पत्थर नहीं होता, निर्मल हो जाता है। दूसरे भी नहा–धो उठते हैं।

राजा : तुम पर विश्वास करूँ।

रानी : अपने–आप पर करो।

राजा : तो सुनो, कल प्रातःकाल उस शिविर के नीचे बहती हुई गंगा के तट पर हम लोग चलें। वहीं तुम्हें यह बात बताकर मैं सदा के लिए पत्थर का हो जाऊँगा। चलो।

रानी : तैयार हूँ।

राजा : एक बार फिर से सोच लो।

रानी : सोच लिया है।

राजा : जिस स्त्री ने हठ किया है उसने दुःख पाया है।

रानी : जिस पुरुष ने हठ किया है उसने कष्ट उठाया है।

राजा : सुनो।

रानी : मैं और कुछ नहीं सुनना चाहती।

(रानी गुस्से में भीतर जाने लगती है,
राजा उसे रोकता है।)

राजा : रानी !

रानी : तुम्हारी रानी मर गई। हटो, मेरा रास्ता छोड़ दो।

(मन्त्री आता है।)

राजा : नहीं, रानी क्यों मरेगी। रानी का राजा ही मरेगा।

मन्त्री : यह मैं क्या सुन रहा हूँ महाराज !

राजा : मन्त्री विजयसेन, तुम आ गए। अच्छा हुआ। सुनो, मेरा अन्त समय आ गया।

मन्त्री : क्या कह रहे हैं महाराज !

राजा : मोह और भावुकता से मुझे मत देखो। इसका अर्थ आज मुझे मालूम हो गया है। वह देखो, मेरे प्राणों से प्यारी मेरी रानी मेरी जान लेने के लिए खड़ी है। मैं अपनी जीवन के एक रहस्य को बताकर उसी क्षण पत्थर हो जाऊँगा।

मन्त्री : नहीं, यह असम्भव है महाराज।

राजा : रानी के लिए सम्भव असम्भव कुछ नहीं है।

मन्त्री : राजा केवल रानी के लिए नहीं है।

राजा : नियति की यही इच्छा है। वरना मैं स्त्री के मोह में इतना अन्धा न हुआ होता।

मसखरा : घबड़ाइए नहीं, यह नाटक है। राजा–रानी का नाटक। राजमहल का फाटक।

राजा : आज अभी, इसी रात के तीसरे पहर यहाँ एक घटना घटी है। और मुझपर श्राप सौगन्ध है कि मैं यदि उस बात को किसी से कह दूँ तो उसी क्षण मरकर पत्थर हो जाऊँगा।

मन्त्री : महारानी, ऐसा हठ मत करो। महाराज का जीवन उस बात से कहीं ज्यादा मूल्यवान है।

(रानी जैसे कोप–भवन में बैठ गई है।)

राजा : सब बेकार है। मौत के अलावा अब मेरे पास और कोई चारा नहीं। जाओ, राजद्वार पर घोषणा कर दो कि राजा अंगध्वज, अपनी रानी के हठ से प्राण त्यागने जा रहे हैं। जाओ, मोह में मत पड़ो।

(राजा, रानी और मन्त्री जाते हैं। सारे पंछी गाना शुरू करते हैं।)

भूल गई है नारि आन कै आनै कीन्हा।
कातै मोटा सूत कातन को चाहै झीना।।
लहँगा पाछे जरै चूल्ह में पानी नावा।
बेटी को है ब्याह गीत नानी के गावा।।
देय महावर आँख पैर में कजरा भावै।
ऐसी भोली नारि ताहि का को समुझावै।।

दूसरा दृश्य

(दृश्य में सारे पंछी खड़े हैं। मसखरा आता है।)

मसखरा : अरी ओ मैना।

शर्म के मारे कहाँ उड़ गई ?

आ, देख ले अपनी जाति की महिमा।

रानी अपने हठ के आगे

जान ले रही राजा की।

त्रिया चरित्र जाने नहीं कोय

खसम मारि कै सत्ती होय।।

(सब पंछी गाते हैं।)

भूल गई है नारि आन कै आनै कीन्हा।

कातै मोटा सूत कातन को चाहै झीना।।

देय महावर आँख पैर में कजरा लावै।

ऐसी भोली नारि ताहि का को समुझावै।।

तोता : अरी, ओ री मैना

लाज के मारे कहाँ छिप गई ?

(मैना आगे आती है।)

मैना : बस बस बस !

बहुत हुई बकवास तुम्हारी।

खेल दिखाकर भाग यहाँ से।।

पुरुष जाति कितनी बदमाश।

अब मैं करूँगी पर्दाफाश।

(राजा रानी और मन्त्री तीनों चलते हुए दिखते हैं।

सब पंछी गाते हैं–)

रानी को देखो गुमान

राजा को मारन चली।

मसखरा : रानी का हठ करने

राजा जाता मरने

सब पंछी : रानी को देखो गुमान

राजा को मारन चली

(पंचम और गंगा दायीं ओर दिखते हैं।)

पंचम : अरी गंगा ! मैं तुझे कब से ढूँढ़ रहा हूँ।

गंगा : मैं खाली बैठी हूँ क्या ?

(गंगा अपने केश सजा रही है।)

पंचम : मैं कब से खेत में हल चला रहा था।

गंगा : मैं नदी में कपड़े धो रही थी।

पंचम : मैं खेत में तेरा इंतजार कर रहा था।

गंगा : मैं खाली बैठी हूँ क्या ?

पंचम : हे ! तू सीधे मुँह क्यों नहीं बोलती ?

गंगा : हाँ, तेरा मुँह बड़ा सीधा है।

पंचम : अरे तो क्या हुआ ?

गंगा : जो मैंने देखा मेरा कलेजा फट गया।

पंचम : ला, मैं सुई–धागे से सिल दूँ।

गंगा : चुप रह, चापलूस कहीं का।

पंचम : देख मुझे गुस्सा मत दिला। तू नहीं जानती मेरा गुस्सा।

गंगा : तू भी नहीं जानता मेरा गुस्सा। मारूँगी ऐसा धक्का जा गिरेगा कलक्ता।

(सब पंछी गाते हैं।)

लगिगै जोबनवाँ कै धक्का
बलम कलकत्ता निकरि गै।
सोने की थाली में जेवना परोस्यों
जेवना न जेवैं फुलावैं गलुक्का
बलम कलकत्ता निकरि गै।

पंचम : अरे तो ऐसा हुआ क्या ?

गंगा : तुम्हारे जान को कुछ नहीं हुआ।

पंचम : क्या हुआ ?

गंगा : नदी किनारे मैंने देखा
पानी पीने बकरी आयीं
सब पानी पीकर चली गयीं।

पंचम : तो ?

गंगा : पर इक बकरी
पानी पी उत खड़ी रही।

पंचम : ऐसा क्यों भाई, ऐसा क्यों ?

गंगा : उसने देखा, नदी धार में सुंदर फल इक बहता आया।

पंचम : जिसे देखकर बकरी का मन ललचाया।

गंगा : वह मन में बोली–

पंचम : हाय खाने को वह फल किसी तरह मिल जाता तो जी रह जाता, मन भर जाता।

गंगा : बस, वह जी ललचाये

नदी किनारे खड़ी रही

पंचम : और उधर पहुँचकर अपने घर देखा।

अरे इक बकरी गायब

उसकी यह हिम्मत

करूँ हिम्मत।

गंगा : चला तेज कदमों से बकरा।

पंचम : नदी किनारे उसको पकरा।

ओ री बकरी अकल की सकरी

यहाँ खड़ी क्यों ?

गंगा : बकरी बोली–

पंचम : हे प्राण प्यारे

जगत से न्यारे मेरे बकरे

मैं तेरे संग घर चलूँ तभी

जब तुम मेरे को वह फल ला दो।

गंगा : ठीक कहा।

वह था उसका प्रेम

पंचम : प्रेम नहीं कद्दू।

गंगा : चुप रह बुद्धू।

पंचम : लो चुप हो गया।

गंगा : बकरा बोला–

पंचम : फल लेने मैं जल में जाऊँ

नदी धार में डूब मरा तो ?

गंगा : यह कहकर निर्दयी हृदयहीन बकरा, बकारी को मारने लगा। हाय। हाय।

(गंगा रोने का अभिनय करने लगती है। पंचम अपने साफे को उतार उसके आँसू पोंछने लगता है। कपड़े में से आँसू गारता है।)

गंगा : **(सहसा)** मत छुओ मुझे। पुरुष जात इतनी निर्दयी हैं। जानवर है। मक्कार है।

थुड़ी है। धिक्कार है।

पंचम : अरे रे रे, तू मेरी सरकार है।

गंगा : मैं अब तेरे पास नहीं रहूँगी।

पंचम : क्या कहा।

गंगा : मैं अब तुमसे शादी नहीं करूँगी। नहीं करूँगी। नहीं करूँगी।

पंचम : इतना गुमान।

गंगा : कहाँ है तुझमें ईमान ?

पंचम : अच्छा।

गंगा : मैंने चुनरी लाने को कहा था, कहाँ है मेरी चुनरी ?

पंचम : चुनरी जब शादी होगी तो मिलेगी।

गंगा : मैंने मुंदरी गढ़ाने को कहा था, कहाँ है मेरी मुंदरी ?

मुंदरी माने अँगूठी। नहीं समझे, अँग्रेजी में समझाऊँ ?

पंचम : अरे फसल काटने दे, मुंदरी गढ़ा दूँगा।

गंगा : लालगंज के मेले में ले जाने को कहा थां

पंचम : अरे बैलगाड़ी टूट गई तो मैं क्या करूँ ?

गंगा : अपना सिर फोड़ो।

पंचम : ला पत्थर, मैं अपना सिर फोड़ लेता हूँ। तुझे मेरी मजबूरी का पता नहीं, मेरी गरीबी का पता नहीं। बाढ़ आई फसल बहा ले गई। सूखा पड़ा, सब सत्यानाश हो गया। अकाल आया.....

गंगा : तो मैं क्या करूँ ? बाढ़ आएगी। सूखा पड़ेगा। अकाल आएगा। पर हमारी जिन्दगी तो लौट कर नहीं आएगी।

पंचम : तो ला पत्थर, मैं अपना सिर फोड़ लूँ।

गंगा : मैं कहाँ से लाऊँ ?

पंचम : अच्छा, मैं लाता हूँ।

(पंचम जाता है। राजा को पकड़कर लाता है।)

पंचम : ले, इतना बड़ा पत्थर ले आया।

गंगा : अरे, ई तो पूरा पहाड़ है।

पंचम : तू मुझे समझती क्या है ?

गंगा : पहाड़ तो हनुमान जी को उठाते सुना था।

पंचम : हनुमान जी मेरे बाबा के बाबा के बाबा के बाबा के बाबा थे।

(मसखरा बीच में आ टपकता है।)

मसखरा : हनुमान जी मेरे दादा के लकड़दादा के सकड़दादा के पकड़दादा थे।

गंगा : हे, तू कहाँ से बीच में टपक पड़ा ?

पंचम : दाल–भात में मूसरचन्द।

गंगा : चेहरा देखो जैसे लंगूर।

पंचम : न आम न केला न अंगूर।

मसखरा : अरे सिर क्यों टूटे–फूटे। मैं कर दूँ पंचायत।

पंचम : जो बिना बुलाए चला आए, वह पंच नहीं परपंच।

गंगा : हम दोनों चाहे झगड़ें चाहे कटि मरें, तू कौन होता है हमारे बीच आने वाला।

पंचम : भागता है कि नहीं।

(दौड़ा लेता है। मसखरा भागता है। दोनों दौड़ाते हैं।)

पंचम : हाँ, तो मैं क्या कह रहा था ? नहीं, नहीं, मुझे गुस्से में कहना होगा। हम दोनों आपस में लड़ रहे थे। हाँ, मुझे याद आया (गुस्से में) तू मुझे समझती क्या है ?

गंगा : इस पत्थर से अपना सिर फोड़ने जा रहे थे न !

पंचम : पत्थर नहीं, पहाड़ से सिर टकराने जा रहा हूँ।

(गंगा पास आकर देखती है।)

गंगा : अरे, यह पहाड़ नहीं आदमी है।

पंचम : आदमी की शक्ल का पहाड़ है।

गंगा : नहीं, नहीं, यह पत्थर नहीं है।

पंचम : पत्थर होने जा रहा है।

गंगा : झूठे कहीं के।

पंचम : राम कसम, यह पत्थर होने जा रहा है।

गंगा : क्यों ?

पंचम : स्त्री के मोह में।

गंगा : झूठ, बिल्कुल झूठ।

पंचम : पूछ लो। क्यों राजा, मैं झूठ बोल रहा हूँ ?

(राजा सिर हिलाता है।)

गंगा : मैं पूछती हूँ ! क्यों राजा, यह सही है ? अपनी स्त्री के कारण तुम पत्थर होने जा रहे हो ?

(राजा स्वीकृति में सिर हिलाता है।)

गंगा : देखो, राजा अपनी रानी को कितना प्यार करता है।

पंचम : (अलग से) पुरुष तो प्यार करता ही है। तभी तो मारा जाता है।

गंगा : अपनी स्त्री की बात रखने के लिए प्राण देने जा रहा है।

पंचम : तभी तो पुरुष कहता है–प्राणप्रिये ! तू मेरी जान से भी ज्यादा प्यारी है !

गंगा : यही बात तुम मुझसे कहो।

पंचम : कहने में क्या है। तीन बार कह देता हूँ।

गंगा : तो यही करके दिखाओ।

पंचम : क्या ?

गंगा : मेरे लिए पत्थर हो जाओ !

पंचम : क्या कहा ?

गंगा : मेरे लिए पत्थर हो जाओ !

पंचम : अरे, पागल तो नहीं हो गई ! मैं कोई राजा अंगध्वज हूँ।

गंगा : मेरे लिए पत्थर हो जाओ !

(पंचम भागता है। गंगा पीछा करती है और
अपनी बात दुहराती है।)

पंचम : अरे, भागती है कि नहीं। मारूँगा ऐसा डण्डा कि तेरा माथा हो जाएगा ठण्डा। मैं इतना बेवकूफ नहीं कि एक औरत के कारन अपनी जान गँवा दूँ !

(गंगा बुरी तरह नाराज और जिद्दी बच्चे की तरह रोती हुई जमीन पर अपने पैर घिसने लगती है। और वही बात दुहराती रहती है। पंचम चीखता है और उसे मारने–पीटने का अभिनय करता है। गंगा का रोना और पंचम का गुस्से से चाखना बढ़ जाता है।)

दूसरा अंक

पहला दृश्य

(सारे पंछी खड़े हैं। मैना एक ओर चुपचाप बैठी है। तोता बड़े गुमान से खड़ा है। मसखरा अपनी दाढ़ी को अपने डण्डे से लपेटता हुआ आता है। उसे देखकर तोता हँस पड़ता है। मसखरा भी हँसने की नकल करता है।)

तोता : ऐअ तू क्यों हँसता है ?

मसखरा : अरे, इसको हँसना कहते हैं ?

(अजब हँसी दिखाता है।)

तोता : यह हँसना नहीं रोना है।

मसखरा : वही तो मुझे कहना है। तोता समझता है कि उसकी जीत हो गई। पर यह जानेगा कैसे कि हर जीत में एक हार होती है। हर हार में एक जीत होती है। (सहसा) अरे ! मैना क्यों वहाँ रूठ के बैठी है ?

(सारे पंछी गाते हैं। मसखरा ताल दे रहा है।)

मैना रूठ गई ऐसी कि बोला न जाय,
मैना रूठ गई !
हाँ मैना रूठ गई ऐसी कि बोला न जाय,
मैना रूठ गई।

नीलकण्ठ : नारि अकेली देखि के सुअना किया विचार।
अब किस विधि इससे बचूँ ये है जुलमी नार।

(सब गाते है।)

सब : मैना रूठ गई
हो, मैना रूठ गई ऐसी कि बोला न जाय।
मैना रूठ गई।

मसखरा : क्योंकि तोता ने दास्तां दिखाकर यह साबित किया– क्या ?
तीन लोक तिहुँकाल में, महामनोहर नार।
सुःख दुःख की दाता यही, देखों सोच विचार।।

नीलकण्ठ : चुप रह !
तीन लोक तिहुँकाल में, महामनोहर नार।
सब सुख की दाता यही, देखो सोच विचार।।

सब : मैना रूठ गई।

मैना रूठ गई ऐसी की बोला न जाय

मैना रूठ गई।

तोता : मैंने तभी कहा

हे री मुझे मत छेड़

पर जिद्दी तिरिया जात

अपनी कथा देख रूठ गई।

(मैना के पीछे–पीछे तोता जाता है।)

नीलकण्ठ : लड़ते हैं, झगड़ते हैं।

पर एक के बिना दूसरे तरसते हैं।

मसखरा : यह माया मेरी समझ में नहीं आती

जितना दाढ़ी काटता हूँ यह और बढ़ जाती।

नीलकण्ठ : अब यहाँ से तशरीफ का टोकरा ले जाइये।

मैना की दास्तां शुरू है। कहीं और जाकर नमकमिरिच लगाइए।।

(नीलकण्ठ मसखरे की दाढ़ी पकड़ ले जाता है। सिर पर

लोटा, हाथ में कोई गठरी लिये गंगा आती है। राजा का मन्त्री पीछा करता है।)

मन्त्री : अरे सुनती हो। अरे तेरा ही नाम गंगा है। अरे गंगा, ओ री गंगा। अरे बहरी है क्या ? सुनती ही नहीं। अरे सुनती है रे ! हे रे सुनती है। अरे, इसके कान पर तो जू तक नहीं रेंगती।

(गंगा के कान के पास जुआँ रेंगा। सामान रखकर सिर

खुजलाती है। कुएँ को पकड़ती है।)

गंगा : अब बोल। क्या करूँ तेरा ? अचार बनाऊँ या कूटपीसकर मैदा बना डालूँ। कैसे देख रहा है ! हाथ जोड़कर माफी माँग रहा है। क्या नाम है तेरा ? जंगली। वाह रे बेटा जंगली प्रसाद। तो मेरे सिर को जंगल समझ रखा है। बदमाश कहीं का। अच्छा, अच्छा, बाबा मारूँगी नहीं। चल, जंगल में छोड़ आती हूँ।

(बढ़कर मन्त्री के सिर में डाल देती है।)

मन्त्री : गँवार, बेवकूफ यह क्या किया ?

(उसके सिर में खुजली मचती है। गंगा हँसती है। फिर

मन्त्री के सिर में से जुएँ को निकालकर दर्शकों की ओर फेंक देती है।)

मन्त्री : अरे कुछ सुना तुमने ?

गंगा : अरे कुछ सुना तुमने ?

मन्त्री : तुझको राजा ने बुलाया।

गंगा : राजा अब तक जिन्दा हैं ?

मन्त्री : हाँ, बिलकुल। पर क्यों ?

गंगा : राजा मरकर पत्थर नहीं हुआ ?

मन्त्री : नहीं–नहीं, वह देख।

(दूसरी तरफ राजा दिखता है।)

गंगा : अरे, रानी कहाँ है ?

मन्त्री : यह बात जाकर राजा से ही पूछना।

गंगा : मैं तो तुम्हीं से पूछती, नहीं तो नहीं जाती।

(सामान उठाकर जाने लगती है।)

मन्त्री : अरे रे रे ! बात यह हुई कि जैसे पंचम ने तुम्हें मारा।

गंगा : मारा नहीं दुलारा।

मन्त्री : (अलग से) कमाल है। मार को दुलार कहती है। (प्रकट) अच्छा जो भी हो। जैसे पंचम ने तुझे दुलारा, राजा ने रानी को मारा। रानी को वापस राजमहल भेज दिया। तुझे बुला रहे हैं।

गंगा : क्यों ?

मन्त्री : पता नहीं क्यों ?

गंगा : अगर मैं न जाऊँ तो ?

मन्त्री : बावरी, क्यों नहीं जाएगी ? राजा के बुलाने पर प्रजा जाती है। अहोभाग्य, राजा तुझे बुलाएँ। राजा से मिलेगी, तेरी किस्मत चमकेगी !

गंगा : अच्छा !

मन्त्री : चलो !

गंगा : चलो !

(दोनों चलते हैं। पंछी गाते हैं)

तार काटी तरकुल काटी
काटी बन का खाजा।
पहन पैर मा घुँघरू
चमकि चलूँ राजा !

मसखरा : झाऊँ माऊँ झाऊँ माऊँ।
झाऊँ माऊँ झाऊँ माऊँ।।

सब : राजा कै रजाई जरै
भइया के दुपट्टा।
पूस मार घूस मार
मुसरी के बच्चा।।

(गंगा को संग लिये मन्त्री राजा के पास पहुँच जाता है।)

मन्त्री : देख लीजिए, गंगा आपके सामने खड़ी है।

गंगा : इसे कुछ कम दिखाई पड़ता है ?

मन्त्री : चुप रह।

गंगा : तू चुप रह।

(मन्त्री भागता है।)

राजा : गंगा तू आ गई ?

गंगा : (अलग से) पक्का, इसे कुछ कम दिखाई पड़ता है।

राजा : राजा के पास आई है तो कुछ ले आई है ?

गंगा : मक्के की दो रोटी है।

एक लोटा पानी है।

राजा : किसके लिये ले जा रही थी ?

गंगा : उसी दाढ़ीजार के पूत के लिए।

राजा : तेरी उससे शादी हो गई है ?

गंगा : मेरी शादी उस घनचक्कर के साथ ?

आँख न दीदा

माँगे मलीदा !

राजा : अरे उसे गाली देती है ?

गंगा : उसे न दूँ तो किसे दूँ। उसी से तो मेरा.....।

(लजा जाती है।)

राजा : पर वह तो तुझे मारता है।

गंगा : मैं भी तो उसे मारती हूँ।

राजा : कभी मारा भी है ?

गंगा : हक तो है।

(राजा चुप हो जाता है। गंगा अपनी पोटली खोलकर एक

रोटी देती है।)

गंगा : एक रोटी उसके लिए।

राजा : मैं यह रोटी नहीं खा सकता।

(गंगा रोटी वापस लेकर पोटली में रखती है।)

मसखरा : यही तो बात है, जिसके पास रोटी है वह खा नहीं सकता। जिसके पास भूख है रोटी नहीं है। किसी के मुँह, तो दाढ़ी नहीं। किसी के पास दाढ़ी है, उसके पास मुँह नहीं।

राजा : पंचम बहुत गरीब है ?

गंगा : गरीब नहीं है। मेरे लिए खाने–पहनने को नहीं है।

राजा : मैं तेरे लिए खाने–पहनने को इन्तजाम करता हूँ।

गंगा : मैं औरों की कमाई नहीं खाती।

राजा : (स्वागत) यह कैसी आश्चर्यजनक है और आकर्षक भी। ये दोनों तत्त्व मुझे भाते हैं। मैं इस तरह नष्ट नहीं करना चाहता। जिस पंछी के पंख सुन्दर हैं और कण्ठ स्वर मधुर है उसे पिंजरे में बन्द करके एक गर्व का अनुभव होता है। विहंग का सौन्दर्य सारे जंगल का है। पर स्त्री स्वभाव से बन्धनों को स्वीकार करती है। (प्रकट) ऐ लड़की !

गंगा : मेरा नाम गंगा है।

राजा : जा अपने पंचम को भेज दे। राजमहल में कोई नौकरी दे दूँगा।

गंगा : (प्रसन्न) सच ! उसे नौकरी मिल जाएगी। वह परदेस में धन कमाएगा। मेरे लिए पियरी ले आएगा। मुंदरी गढ़ाएगा।

(गंगा खुशी से नाचती हुई भागती है। सामने पंचम को देख घबड़ा जाती है।)

पंचम : कहाँ थी अब तक ? यह कोई समय है रोटी खाने का ?

ले जाव, हट जाव मेरी आँखों के सामने से !

गंगा : हे खबरदार ! आगे जो जबान चलाई।

पंचम : क्या ?

गंगा : जाकर उसे आँख दिखाओ जो तुमसे ब्याही हो। मैं चली। राम राम।

(जाने लगती है। पंचम दौड़कर उसका हाथ पकड़ लेता है।)

पंचम : एक बार नहीं, न जाने कितनी बार हमारी शादी हुई।

गंगा : शादी हुई। और टूटी !

पंचम : फिर हुई।

गंगा : फिर टूटी।

पंचम : रोज मिलते हैं।

गंगा : रोज बिछुड़ते हैं।

पंचम : इसका कोई अन्त है रे ?

गंगा : आज भूख नहीं लगी ?

पंचम : गुस्सा लगा है।

गंगा : अरे राजा से मिलकर आई हूँ। उसने खुद बुलाया।

पंचम : ओह, तो यह वजह है।

गंगा : अरे तुम समझते क्या हो मुझे ? लो, सीधे से रोटी खा लो।

(पंचम रोटी खाता है। गंगा जमीन पर रेखा खींचती है।)

गंगा : जब मैं अकेली होती हूँ तो अपने एक बल से सीधी राह चली जाती हूँ। मुड़कर दायें–बायें भी नहीं देखती। पर देखती हूँ कहीं कुछ अकेला नहीं है। सबका एक जोड़ा है।

(गंगा अपनी दुनिया में खोई हुई नीचे जमीन पर रेखा खींचकर बाघा गोटी का खेल खेलती है।)

मसखरा : यह कुछ कहना चाह रही है पर बेचारी कह नहीं पा रही है। जरा टेलीफोन लगाकर सुनूँ तो। (अपनी दाढ़ी गंगा की ओर बढ़ाता है) आहा ! यह कहना चाह रही है–शक्ति जब अकेली होती है तो लड़कर जलाती है। जब दो मिल जाते हैं तो सगुन हो जाता है।

गंगा : बाघ हो या शेर हो। इस रेखा पर पड़ोगे तो जल जाओगे। कितनी बार तो समझाया। या तो भीतर कोठे में रहो या सीधे बाहर निकल जाओ।

(वह एक टाँग पर उछल–उछलकर बाघा गोटी खेल रही है।)

गंगा : अरे, फेंका इधर, चला गया उधर। उल्लू कहीं का। एक ओर मैं। दूसरी ओर तू। एक ओर अर्जन। दूसरी ओर वर्जन। एक आचार–दूसरा विचार।

पंचम : अरे क्या बक–बक लगा रखी है ?

(पंचम खा–पी चुकता है। गंगा का खेल खत्म हो जाता है।)

गंगा : मेरी दादी थी। मुँह में एक भी दाँत नहीं (नकल करती है) ऐसे बोलती थी। हाँ। बचपन में जब बाघा गोटी खेलती थी तब दादी यही सब बड़बड़ाती थी। (सहसा) अब मैं दादी हूँ।

पंचम : किसकी ?

गंगा : तुम्हारी।

(विराम)

पंचम : यह बता राजा ने क्या कहाँ ?

गंगा : यह पूछो राजा ने क्या नहीं कहा। मैं चाहूँ तो तुम्हें जेल भेजवा दूँ।

पंचम : निकालूँ डण्डा। करूँ तेरा सिर ठण्डा।

गंगा : मुसण्डा। मुचण्डा। पण्डा। सरकण्डा।

(गंगा भागती है। पंचम उसे पकडत्र नहीं पाता।)

गंगा : अच्छा, ले पकड़ ले। अरे मैं तो हँसी कर रही थी। देखो हार गए तो रूठ गए। तो बड़ा जैसे मुँह बनाकर बैठ गए। (सहसा) सुनो, राजा तुम्हें नौकरी देगा।

पंचम : (प्रसन्न) अच्छा !

गंगा : पर मैं जाने नहीं दूँगी।

पंचम : क्या ?

गंगा : मैं तुम्हारे बिना एक दिन भी नहीं रहूँगी। जहर खा लूँगी।

पंचम : अब देखो तमासा। राजा से मेरी नौकरी–चाकरी खुद पक्की कर आई और अब खुद जहर खाय रही हैं। आगे चले तो डण्डा मारे, पीछे चले दुलत्ती !

गंगा : हाँ, हाँ, मैंने वह भी कही, अब यह भी कहती हूँ। परदेस नहीं जाने दूँगी।

पंचम : अरे भाग जगी, राजमहल में नौकरी लगी। गरीबी दूर हो जाएगी। पियरी रँगेगी। मुंदरी गढ़ेगी। तुझे भी वहीं बुला लूँगा। खूब मौज उड़ाएँगे, रस–मलाई खाएँगे।

गंगा : सूखी–रूखी खाऊँगी। नहीं जाने दूँगी।

पंचम : मैं जाऊँगा। क्यों राजा से कहा ? नहीं जाऊँगा तो राजा बँधवाकर ले जाएगा।

गंगा : यही तो नहीं पता। तब माँगा क्यों ? अब मना क्यों कर रही हूँ ? किससे क्यों लड़ती हूँ। क्यों किस बात पर रोती हूँ ? तुम जिद करते हो तो जाओ। मैं जिद करती हूँ तो मुझे मारते हो। जाओ, खुशी से जाओ। तुम्हें नजर न लगे।

(अपनी आँख का काजर उसके गाल पर लगा देती है।)

पंचम : राम–राम।

(पंचम जाता है। गंगा निःशब्द खड़ी रह जाती है।

(पंछी गाते हैं–)

सारी रैन मोर संग जागा।
भोर भये तो बिछुड़न लागा।।
उसके बिछुड़ते फाटत हिया।
ए सखि साजन ना सखि दिया।।
सोभा सदा बढ़ावन हारा।
आँखिन ते छिन करूँ न न्यारा।।
आठ पहर मेरा मन रंजन।
ए सखि साजन ना सखि अंजन।।

दूसरा दृश्य

(राजमहल। मन्त्री पुकारता हुआ आता है।)

मन्त्री : महारानी ! महारानी !

(रानी आती है।)

मन्त्री : राजमहल में जो नया नौकर भेजा है राजा ने, क्षमा हो, इसका एक रहस्य है ?

रानी : बिना किसी पूर्व सूचना के तुम्हारे यहाँ आने का मतलब ?

मन्त्री : भला नाम है पंचम। पंचम चौकीदार। राजा ने चौकीदार बनाकर भेजा है। जंगल में राजा करे मंगल। रंगमहल में चौकीदारी हो रानी की। उस दिन मैंने न बचाया होता तो राजा टुकड़े–टुकड़े कर देता।

रानी : मन्त्री, तुम यहाँ किसलिए आए ?

मन्त्री : आपके दर्शनों के लिए।

रानी : दर्शन हो गया। अब जा सकते हो।

मन्त्री : मैंने सोचा–राजा बिना रानी की बहुत अकेला–अकेला लगता होगा। देखिए न, राजा ने आपको अकेले राजमहल में वापस भेज दिया और खुद प्रजा के जंगल में शिकार खेल रहे हैं। मुझे भी अपने पास से हटा दिया। तो मैं आपके दर्शनों के लिए आया था।

रानी : बिना राजा के रानी के दर्शनों को कोई अर्थ नहीं।

मन्त्री : कितने दिन हो गए, राजा नहीं लौटे। और चौकीदार बनाकर भेजा उसी मूर्ख किसान को जो एक भोली–भाली औरत को उस तरह पीट रहा था। जिसे देख कर राजा का सारा ईमान ही बदल गया। कहाँ जा रहे थे, गंगा तट पर रहस्य बताने.....मैं न होता तो अब तक आप जिन्दा न बचतीं।

रानी : बकवास बन्द करो।

मन्त्री : महारानी, आप बहुत सरल–सीधी है। आप पर जुल्म हुआ है। एक भयानक घटना घटी है।

रानी : घटनाओं से कहीं बड़ा है हमारा जीवन।

मन्त्री : दर्शन की भाषा नहीं जानता। इतना ही पता है कि जीवन की हर घटना तन–मन पर अमिट छाप छोड़ जाती है। मनुष्य उन्हें कभी नहीं भुला पाता।

रानी : कहना क्या चाहते हो ?

(मन्त्री चुप है।)

रानी : अपनी बात का कोई उदाहरण दे सकते हो ?

मन्त्री : किसी शान्त भरे तालाब में एक पत्थर का टुकड़ा फेंका जाय तो उससे उतनी लहरें उठेंगी कि मानो तालाब काँपने लगा है।

रानी : पर सागर समुद्र में ?

मन्त्री : मुझे उसकी कल्पना नहीं।

रानी : समुद्र में हर क्षण तरंगें उठा करती हैं और तट से टकराती हैं। स्त्री जीवन समुद्र की तरह है। काँपेगा वही जो तालाब की तरह छिछला और तृण की तरह हल्का है।

(मन्त्री हँसता है)

रानी : लगता है, स्त्री नहीं देखी। देखी भी तो पहचाना नहीं। उसे रहस्यमयी कहा। क्योंकि वह तुम्हारे तर्क से परे है।

मसखरा : वाह–वाह–वाह, क्या फिलासफी झाड़ी है।

नारी जीवन की सच्ची तस्वीर उतारी है।

पर तब काहे हजारा मोती के लिए अपने राजा से लड़ी ?

काहे उसे पत्थर तक बनाने के लिए उठ खड़ी हुई ?

भइया रे, तिरिया की माया जाने कौन !

मन्त्री : मेरी जरा–सी हँसी से समुद्र में तूफान आ गया।

रानी : यह किसने कहा–समुद्र मे तूफान नहीं आता। तूफान उसकी साँसों में है।

मन्त्री : उसी तूफान के दर्शन करने आया हूँ।

रानी : तूफान उसके भीतर रहता है।

मन्त्री : आप सत्य कहती हैं महारानी, स्त्री के आहत सम्मान का वह तूफान आपके अन्दर देख रहा हूँ।

रानी : क्या ?

मन्त्री : आपके प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट करता हूँ।

रानी : श्रद्धा वाचाल नहीं होती।

मन्त्री : राजा द्वारा आप पर किए गए अपमान की सबसे अधिक चोट मेरे दिल पर है।

रानी : राजा मेरे पति हैं। उनका कोई भी व्यवहार मेरे लिए न्याय है।

मन्त्री : राजा ने क्यों नहीं बताया, वह रहस्य की बात क्या थी ? राजा ने भय दिखाकर सब पर पर्दा क्यों डाल दिया ?

रानी : यह सवाल मेरा है।

मन्त्री : हमारा है।

रानी : मैंने उत्तर पा लिया।

मन्त्री : क्या ?

रानी : राजा मेरे पति ही नहीं, इतने बड़े देश के प्रजापालक हैं।

मन्त्री : पर वह रहस्य आपका है।

रानी : होगा।

मन्त्री : राजा ने उस रहस्य को अपने दिल में रखकर आपको अपने से दूर कर दिया।

रानी : चुप रहो।

मन्त्री : ठीक है, मैं चुप हो जाऊँगा। उस रात वह बूढ़ा यहाँ.....इस जगह....हाँ इसी जगह राजा से जो रहस्य बता रहा था, मैं वहाँ छिपा सब कुछ सुन रहा था।

रानी : क्या ?

मन्त्री : आपकी सौगंध एक शब्द भी झूठ नहीं बोलूँगा (इधर–उधर देखकर) रहस्य बताने से पहले बूढ़े ने राजा से शपथ ली कि यदि राजा तू इस बात को किसी से कहेगा तो उसी क्षण पत्थर हो जाएगा। तब उसने बताया–आज रात राजा अंगध्वज को एक प्रेतात्मा मार डालेगा।

(रानी घबड़ा जाती है।)

मन्त्री : राजा ने कारण पूछा। तब उसने बताया, उस प्रेतात्मा और राजा का पूर्वजन्म का बैर है। आज अपनी मौत का बदला लेने आ रहा है।

(रानी भयभीत हो जाती है।)

मन्त्री : राजा अंगध्वज पूर्वजन्म के मणिसेन नामक साहूकार थे। आपका नाम तब केसर था।

रानी : केसर।

मन्त्री : हाँ, धर्मपत्नी केसर।

रानी : राजा के मुँह से तब यही नाम निकला था–'केसर'।

(सन्नाटा)

मन्त्री : एक बार मणिसेन सौदागर अपने व्यापार के सिलसिले में कहीं दूर देश गया था और उसकी स्त्री केसर अकेली थी। उसकी सेवा में रतनजोति नाम का.....।

रानी : छिः छिः छिः ! बस करो। ये बेसिर–पैर की कहानियाँ तुम लोगों ने गढ़ी हैं।

मन्त्री : रानी, सुनो ! सुनो !

रानी : कहीं कोई प्रेतात्मा नहीं। यह अपने मन का भय संस्कार है।

मन्त्री : प्रेतात्मा ने सोचा–राजा को मारकर रानी से बदला नहीं होगा।

रानी : तेरी कपट चाल यहाँ नहीं चल सकती।

मन्त्री : उसने तब बदला लेने का यह भयंकर उपाय सोचा–राजा को, रानी के पूर्वजन्म का रहस्य बताकर आजन्म राजा से रानी को घृणा दिलाई जाय।

रानी : यह झूठ है। तेरी कपट चाल है।

मन्त्री : मैंने कानों से सुना है। आँखों से देखा है।

रानी : जो जैसा होता है, वही सुनता है, वही देखता है।

मन्त्री : मैं सत्य कहता हूँ।

रानी : मेरा सत्य तुम कहोगे ? जिसे जीवन का पता नहीं, वही शून्य भरने के लिए प्रेत की कल्पना करता है।

मन्त्री : आप देखती नहीं ! तब से आपके प्रति राजा के व्यवहार में एक बुनियादी फर्क आया है। आपके बिना पहले एक क्षण भी नहीं रह सकते थ। अब इतने दिनों से आपको यहाँ अकेली छोड़कर.....।

रानी : स्त्री का प्रयोजन पुरुष को बाँध रखना नहीं है।

मन्त्री : पर यह राज–परिवार है। राजा को अपने घर–परिवार में रहना चाहिए।

रानी : जिस मात्रा में हम पारिवारिक हो जाते हैं, उसी मात्रा में हम जगत व्यवहार के लिए अयोग्य बन जाते हैं। राजा का घर–परिवार पूरा देश है।

मन्त्री : अपने को शब्दजाल में छिपाकर अपने साथ छल कर रही हैं।

रानी : कोई है !

(सन्नाटा)

मन्त्री : सारे दास–दासियों को आज छुट्टी दे दी गई है। मैं खड़ा हूँ आपकी सेवा में। आज्ञा दीजिए।

रानी : यहाँ से चले जाओ।

मन्त्री : यह आज्ञा नहीं, यह तो गुस्सा है।

रानी : ओह ! तो तेरी यह योजना है।

मन्त्री : आपको कुछ देने आया हूँ।

रानी : कुछ है भी तेरे पास।

मन्त्री : आप इस राजभवन को त्यागकर मेरे साथ चलिए। मैं आपके लिए एक नया राज्य बनाऊँगा।

मसखरा : वाह–वाह ! मन्त्री मजेदार है। रँगा हुआ सियार है। बातें हैं कि रसगुल्ला। देखो मचाओ मत हल्ला।

रानी : विश्वासघाती ! मैं अकेली नहीं हूँ।

(कमर से कटार निकाल लेती है।)

रानी : कायर !

(मन्त्री हँस रहा है।)

रानी : तू मेरा कुछ नहीं कर सकता।

मन्त्री : ये सुन्दर कोमल हाथ इसलिए नहीं बने हैं।

रानी : जो कोमल है वही अजेय है।

(मन्त्री बढ़कर रानी का हाथ पकड़ लेता है। संघर्ष होता है। पंचम दौड़ा आता है। मन्त्री को दबोच लेता है। पर इस बीच रानी को कटार लग चुकी है। वह गिरती है। मन्त्री कटार छोड़कर भागता है। पंछी गाते है–)

तिरिया जगत महान है
राखा धर्म बचाय।
शील धर्म के कारने
जीवन दिया गँवाय।।

मैना : साँ कहूँ मैं सूगना
मति तू झूठी जान।
पुरुष नारि के बीच में
साक्षी श्री भगतान।।

सब : साँच कहूँ मैं सूगना मति तू झूठी जान।
पुरुष नारि के बीच में साक्षी श्री भगवान।।

तीसरा अंक

पहला दृश्य

(रानी बेजान पड़ी है। पास राजा खड़ा है।

पंचम दूर खड़ा है। पंछी गाते हैं–)

चल चकई वा सर विषय जहँ नहिं रैन बिछोह

रहत एकरस दिवस ही सुह्रद हंस संदोह।

सुह्रद हंस संदोह कोह अरु द्रोह न जाके

भोगत सुख अंबोह मोह दुःख होय न ताके।

बरनै कवि बैताल भाग्य बिनु जाइ न सकई

पिय मिलाप नित रहै ताहि सर चल तू चकई।

चल चकई वा सर विषय जहँ नहिं रैन बिछोह।

रहत एकरस दिवस ही सुह्रद हंस संदोह।।

नीलकंठ : इस दुःख को हम छोटा नहीं समझेंगे।

पहला : मस्तक उठाकर इसे स्वीकार करेंगे।

दूसरा : विश्वासघात की आग से हम भस्म नहीं होंगे।

तीसरा : आँसुओं में डूब जाय तो दुःख का अपमान होगा।

चौथा : जो कुछ हमने रचा है दुःख की सहायता से रचा है।

पाँचवाँ : जिसे हमने दुःख से नहीं पाया वह हमारा नहीं है।

(सब दृश्य बन जाते हैं।)

राजा : यह कैसे हुआ ? क्यों हुआ ?

मसखरा : मैं बताऊँ क्या हुआ ? एक जंगल में चार सियार थे। एक ने कहा–क्या हुआ ? सब बोल पड़े–हुक्का हुआ, हुक्का हुआ।

राजा : जो मैंने सुना, जो देख रहा हूँ.....।

नीलकंठ : सब सच है।

राजा : मैं अपनी रानी बिना नहीं रह सकता।

मसखरा : वाह–वाह, क्या उल्टी माया है। जब रानी जिन्दा थी तो पास नहीं फटकते थे, अब देखो कैसा पियार उमड़ा पड़ रहा है।

(पंछी गाते हैं–)

हाय दई अति निर्दयी

कैसी बिछुरन कीन।

रानी बिनु तलफत मरूँ

जैसे जल बिनु मीन।।

राजा : मैं अकेले जिन्दा नहीं रह सकता।

मसखरा : अरे, अकेले काहे रहोगे। दूसरी बियाह लाना। तुम्हें रानियों की कौन–सी कमी पड़ी है ? दो–दो रुपये में तो मिलती हैं।

(रानी के सिर को अपने अंक में रखकर मानो निःशब्द

विलाप करने लगा है। पंछी फिर गान दुहराते हैं–हाय दई.....।)

पंचम : हे नीलकंठ भगवान ! कोई उपाय करो।

नीलकंठ : उपाय है।

पंचम : है ?

नीलकंठ : राजा अपनी आयु का आधा हिस्सा रानी को दे दे। फिर यह जी आएगी।

राजा : (उत्साह से उठकर) तैयार हूँ।

नीलकंठ : तो लो यह जलपात्र। थोड़ा–सा जल अपनी अंजुरी में लो।

(राजा जल लेता है।)

नीलकंठ : कहो कि मैं अपनी आयु का, अपने जीवन का आधा भाग अपनी रानी को देता हूँ। यह मेरे जीवन का आधा भाग लेकर जी जाय।

(राजा यही दुहराता है।)

नीलकंठ : राजा, ध्यान से सुनो। इस जलपात्र को सदा छिपाकर अपने पास रखना। कभी जरूरत पड़ने पर इसी जल से अपनी दी हुई उम्र वापस ले सकोगे। चलो, जल छिड़क दो। सावधान ! अगर अपने इस दान को कभी भी अपने मुँह से कह दोगे तो इसका फल नष्ट हो जाएगा।

राजा : ऐसा नहीं होगा।

नीलकंठ : एवमस्तु !

(राजा रानी पर अंजुरी का जल छिड़कता है, रानी जीवित

हो उठती है। पंछी गाते हैं–)

सोभा सदा बढ़ावन हारा

आँखिन ते छिन करूँ न न्यारा।

आठ पहर मेरा मन रंजन

ए सखि साजन ना सखि अंजन।

रानी : महाराज, आप कब आए ?

राजा : तुम सो रही थीं, मैं चुपके से आ गया।

(सब हँसते हैं।)

रानी : मैं यहीं सो गई थी ?

राजा : तो क्या हुआ ?

रानी : आप सब मुझे इस तरह क्यों देख रहे हैं ?

राजा : आओ भीतर चलो !

रानी : मैं कहाँ गई थी ?

राजा : कहीं नहीं !

रानी : मैं कहाँ थी ? कहाँ से आई हूँ ? मैं कौन हूँ ?

राजा : अपने–आपको जानना दुःखदायी है।

रानी : नहीं !

नीलकंठ : जब अपने–आप का बोध होता है, तब फिर किसी बात का भय नहीं रहता। यह जानना, टुकड़ों को जोड़ना, संग्रह करना नहीं, आलोकित हो जाना है। जैसे सुबह हो जाती है। हे प्रकाश ! सबमें तुम्हारा आविर्भाव सम्पूर्ण हो। अपने साथ मुझको संयुक्त करो। तभी मेरा अपने–आप से मिलन होगा।

मसखरा : यह देखो, यह बेमतलब आइ जाते हैं फिलासफी झाड़ने। अरे यहाँ कोई समझने नहीं आया, देखने आया सो देखो मुझे !

राजा : मुझे बताना होगा ?

नीलकंठ : सब भोगना होगा।

राजा : भोगना होगा।

नीलकंठ : देखना होगा।

राजा : देखना होगा।

नीलकंठ : जो जितने गहरे छिपा है, जो जितने नीचे दबा है, उसे बाहर लाना होगा। कहीं कुछ रहस्य नहीं है। जो रहस्य है, वही प्रेत है। जो रहस्य है, वही अन्धकार है। मौत है।

राजा : मुझे कहना होगा ?

नीलकंठ : तुम कौन हो ?

राजा : मैं राजा हूँ।

नीलकंठ : तुम्हारा यही अहंकार तुम्हें कुछ नहीं कहने देता। कुछ प्रकट नहीं होने देता।

(सारे दृश्य में जैसे भूचाल आ गया हो।
सब धूमने लगते हैं।)

राजा : सुनो !

(सारा दृश्य अचानक स्थिर हो जाता है।)

राजा : मन्त्री विजयसेन ने तुम्हारी हत्या कर दी थी।

रानी : फिर जी कैसे गई ?

राजा : जीने का रहस्य मैं नहीं जानता।

नीलकंठ : जीवन को रहस्यमय क्यों बनाते हो ?

रानी : फिर मैं जीवित कैसे हुई ?

राजा : मरा हुआ देखा। अभी जीवित देख रहा हूँ।

नीलकंठ : सच क्यों नहीं बोलते ? आँखों से देखते क्यों नहीं ? दूसरों के कहने से ही क्यों चलते हो ?

रानी : मुझसे कुछ छिपा रहे हो।

नीलकंठ : हम सब एक–दूसरे से छिपाते हैं।

राजा : हम सब एक–दूसरे से छिपाते हैं।

रानी : मैं जानना चाहती हूँ–क्यों ?

राजा : रानी !

रानी : तुम सदा मुझसे कुछ छिपाते हो।

राजा : नहीं !

रानी : मुझसे कपट रखते हो।

नीलकंठ : छिपाने में ही शक पैदा होता है।

रानी : मन्त्री विजयसेन ने सच कहा था।

राजा : मत लो उस विश्वासघाती का नाम।

रानी : मन्त्री कहाँ है ?

पंचम : जेलखाने में बन्द है।

रानी : उससे मिलना चाहती हूँ।

पंचम : हत्यारा है।

रानी : इसका सबूत ? लोग मुझे देखने क्यों नहीं देते ? मुझे रहस्य भरी कथाओं में क्यों बाँधकर रखना चाहते हैं ? मैं इसे तोड़कर रहूँगी। मन्त्री सच कह रहा था।

राजा : क्या ?

रानी : तुम्हें उससे भय है। वह तुम्हारा रहस्य जानता है। उस पर झूठा आरोप लगाकर उसे खत्म कर देना चाहते हो। मुझे इस राजमहल की चहारदीवारी में कैद कर ताजिन्दगी सजा देना चाहते हो। तुम्हें मुझ पर नहीं, अपनी प्रेतात्मा पर विश्वास है।

नीलकंठ : जो भीतर दबा भय है वही है प्रेतात्मा !

रानी : मन्त्री से मिलना चाहती हूँ।

राजा : फिर वही जिद।

रानी : हाँ वही। पर फिर वही नहीं !

राजा : सोच लो !

रानी : देखूँगी !

राजा : देखो !

(ताली बजाता है।)

पंचम : जी महाराज !

राजा : रानी को मन्त्री से मिलाओ।

पंचम : जेल का दरवाजा खोद दूँ ?

राजा : खोल दो।

(राजा चला जाता है। पंचम दरवाजा खोलता है ?
मन्त्री निकलता है।)

रानी : तुम सब लोग यहाँ से चले जाओ !

(पंचम चला जाता है। सारे पंछी दृश्यवत् हो जाते हैं।)

मन्त्री : महारानी !

रानी : इतना आश्चर्य क्यों ? तुमने सच कहा था। हमारे पास समय नहीं है।

मन्त्री : आज्ञा दीजिए।

रानी : मैं ऐसी जगह नहीं रहना चाहती, जहाँ परस्पर विश्वास न हो। मैं उस पुरुष के साथ नहीं रह सकती जो रहस्य, छल, कपट की अँधेरी गुफा में बन्दी है। आत्मविस्मृत है। जिसके संग रहकर कुछ करने को न हो, वहाँ मैं एक क्षण नहीं रह सकती।

(दृश्य में एक किनारे चुपचाप राजा प्रकट होता है।
वह सब सुन रहा है। सब देख रहा है।)

रानी : वचन दो, मेरे साथ छल नहीं करोगे।

मन्त्री : छल नहीं करूँगा।

रानी : रहस्य का कोई पर्दा नहीं रखोगे।

मन्त्री : वचन देता हूँ।

(विराम)

रानी : क्या यह सच है, मैं तुम्हारे हाथों मारी गई थी ?

मन्त्री : हाँ, यह सच है।

रानी : फिर मैं जीवित कैसे हूँ ?

मन्त्री : राजा ने अपनी आधी आयु देकर तुम्हें फिर से जीवित किया।

रानी : नहीं !

मन्त्री : तुम्हें अपना आधा जीवन दिया।

रानी : नफरत की आग में जिन्दा जलाने के लिए।

(राजा सामने आकर)

राजा : (अलग से) क्या परिस्थिति सब कुछ बदल देती है ? प्रेम, त्याग, तपस्या अपने–आप में कुछ नहीं होता ? सम्बन्ध केवल बाहर से टिका होता है ? जिसका चित्त स्वाधीन नहीं उसको बाहर से छुटकारा नहीं मिल सकता। जो चुपचाप सब कुछ मान लेता है उसमें इतनी ताकत नहीं कि बाहर को अस्वीकार करे। पर सारा सम्बन्ध क्या उसी बाहर पर निर्भर है ? इसे देखूँगा। देखकर ही विश्वास करूँगा।

मसखरा : ईश्वर तुझे आँख दे।

दूसरा दृश्य

(एक ओर विरह में डूबी गंगा गा रही है।)

गवना कराय छैला घर बैइठउलैं से
अपुना चलें हों परदेस हो बिदेसिया।
रोइ रोइ काटूँ मैं दिनवाँ से रतिया हो
कब अइहैं हमरो परान रे बिदेसिया।

(दूसरी ओर दृश्य में राजा और पंचम)

राजा : पंचम।

पंचम : हाँ, महाराज !

राजा : तेरी गंगा तुझे कभी कोई चिट्ठी–पत्री नहीं देती ?

पंचम : अरे, औरत की जात। आँख से ओझल हुई नहीं कि भूल गई। अरे, वही बाघा गोटी खेलती होगी।

(गंगा विरह में दूसरी ओर डूबी हुई गा रही है। दायीं ओर गंगा गाती हुई दिखती है–)

कहै न कोई परदेसी की बात
जब से गये पिया सुधि नहिं लीने
होई गये पीले गात।
आधे माह आवन हरि कहि गये
सो दिन बीती जात
कहै न कोई परदेसी की बात।

(इस गायन के बीच दृश्य के एक–एक पंछी गंगा के पास जाते हैं। उसके हाथ से पत्र लेकर चलते हैं।

चलते–चलते, उड़ते–उड़ते राजमहल में आते हैं। पंचम के पास आने लगते हैं। राजा बढ़कर उनसे पत्र ले लेता है और चुपचाप पढ़कर फाड़ देता है। फटा पत्र पंचम के हाथ में देता। पंचम उसे कूड़ेदान में फेंक देता है।)

मसखरा : वाह राजा, दूसरे की चिट्ठी फाड़कर क्या बजाते हो बाजा !

राजा : गंगा तुझे भूल गई होगी।

पंचम : चिट्ठी जरूर लिखती होगी, पर पता गलत लिख देती होगी। बड़ी गैर–जिम्मेदार है।

राजा : किसी और के संग चली गई होगी।

पंचम : भाड़ में जाय। मुझे औरतों की कोई कमी नहीं।

राजा : तुमने कोई चिट्ठी–पत्री भेजी ?

पंचम : जब वह नहीं भेजती तो मैं क्यों भेजूँ ?

राजा : किसी मुसाफिर से संदेशा ही भिजवा दिया होता।

पंचम : जो भी उधर जाता है, संदेसा भिजवाता हूँ, पर लगता है किसी से उसकी भेंट नहीं होती।

मसखरा : हाय बेचारा ! कैसी बेवकूफी का है नज्जारा।

तीसरा दृश्य

(गंगा पंचम के विरह में गा रही है–)

कहै न कोई परदेसी की बात
जब से गए पिया सुधि नहिं लीने
पड़ि गए पीले गात।
आध माह आवन हरि कहि गए
सो दिन बीते जात
कहै न कोई परदेसी की बात.....।

(पंछी मुसाफिर के रूप में एक–एक कर उधर से गुजरते हैं।)

गंगा : सुनो, सुनो। ऐ भइया मुसाफिर !

प0 मुसाफिर : क्या है ?

गंगा : राजा नगर में महाराजा का महल देखा है ?

प0 मुसाफिर : देखा है।

गंगा : राजमहल की तरफ से आये हो ?

प0 मुसाफिर : आए हैं।

गंगा : किसी पंचम का नाम सुना है ?

प0 मुसाफिर : सुना है। पंचम राजमहल में चौकीदार है।

गंगा : (प्रसन्न) पंचम को देखा है ?

प0 मुसाफिर : देखा है।

गंगा : पंचम कैसे हैं ?

प0 मुसाफिर : खूब मौज उड़ाता है ? दूध–भात खाता है।

गंगा : अच्छा !

प0 मुसाफिर : खूब मौज उड़ाता है ? दूध–भात खाता है।

(कहता हुआ चला जाता है। दूसरा मुसाफिर
ाई पड़ता है।)

गंगा : सुनो भइया सुनो। मेरी एक विनती सुनो।

दू0 मुसाफिर : क्या, गिनती गिनो। बहिन जी, मेरा हिसाब–किताब तो बहुत कमजोर है। ाफ करो, मैं गिनती नहीं गिन सकता।

गंगा : (अलग से) यह बहरा है क्या ?

दू0 मुसाफिर : मैं अपना नात–पता नहीं बताऊँगा।

गंगा : (ऊँचे स्वर में) राजमहल से आये हो ?

दू0 मुसाफिर : ताजमहल देखा है।

गंगा : पंचम चौकीदार का नाम सुना है ?

दू0 मुसाफिर : हाँ, रास्ते में एक हाथी मिला था। उसके हौदे में हौल्दार बैठा था। थानेदार ाोड़े पर था।

गंगा : अच्छा, अच्छा, अपने रास्ते जाओ।

दू0 मुसाफिर : जब तुम इतना कह रही हो, मैं बैठ जाता हूँ।

(बैठ जाता है। गंगा दूसरी तरफ बढ़ जाती है।
दूसरा मुसाफिर उठ कर चला जाता है। तेज चलता
हुआ मसखरा, तीसरा मुसाफिर बना आता है।)

गंगा : ऐ भइया, सुनो तो !

ती0 मुसाफिर : देखो मैं बहुत जल्दी में हूँ। किसी ऐरे–गैरे का भइया–बेटा नहीं हूँ। बोलो, बोलो, जल्दी बोलो, क्या बात है ? मेरी दाढ़ी मत निहारो, जल्दी के मारे बढ़ गई है। हाँ तो।

गंगा : राजमहल देखा है ?

ती0 मुसाफिर : देखा नहीं तो इतनी जल्दी में क्यों हूँ।

गंगा : क्या देखा ?

ती0 मुसाफिर : क्या नहीं देखा। घोड़े पर चढ़ा बाघ देखा। नंगी धोबिन देखी। एक टके में सवा किलो भाजी सवा किलो सोना बिकते देखा।

गंगा : देखा अपनी आँखों से ?

ती0 मुसाफिर : देखा नहीं, सुना।

गंगा : पंचम चौकीदार का नाम सुना है ?

ती0 मुसाफिर : सुना क्या, देखा भी। मिला भी।

(मुसाफिर बहुत जल्दी में है। भागता रहता है।)

गंगा : अरे सुनो तो !

ती0 मुसाफिर : पूछो ! बहुत जल्दी में हूँ।

गंगा : पंचम ने मेरे लिए कोई संदेसा भेजा है ?

ती0 मुसाफिर : संदेसा ? अरे उसने वहाँ शादी कर ली। एक नहीं, तीन–तीन ! तबला बाजे धींग धींग।

(गंगा रोती है।)

ती0 मुसाफिर : एक औरत ने तो उसे मार–मारकर टाँग तोड़ दी। वह लंगड़ा हो गया है। ऐसे चलता है ऐसे (गंगा उसकी चाल देखकर हँसती है) लौडे उसको देखकर चिढ़ाते हैं–लंगड़ मचंगड़ के तीन मेहरी, एक कूटै एक पीसै एक भाँग रगरी। मुझे जल्दी है, मैं जा रहा हूँ।

गंगा : अरे, सुनो तो।

ती0 मुसाफिर : यहीं से पूछ लो, क्या है ?

गंगा : उसने कुछ कहा है ?

ती0 मुसाफिर : राजमहल में मंत्र मारकर उसे रात को कूकुर बना दिया जाता है। दिन के वक्त भेड़ा। मेंअ..... मेंअ.....भौंअ.....भौं.....मेंअ

(मुसाफिर चला जाता है। गंगा खड़ी रोती रह जाती है।

पंछी गाते हैं–)

कहे न कोई परदेसी की बात।
जब से गये पिया सुधि नहिं लीने
होइ गये पीले गात–
कहे न कोई परदेसी की बात।
आधे माह आवन हरि कहि गये
सो दिन बीते जात

चौथा अंक

पहला दृश्य

(राजा के सामने पंचम डंडे में गठरी लटकाए

खड़ा है।)

राजा : अपने देश जाओगे ?

पंचम : हाँ, अब तय कर लिया।

राजा : नहीं मानोगे ?

पंचम : हाँ, चाहे जो हो जाय। गंगा के बिना अब एक छिन भी नहीं रहा जाता।

राजा : गंगा भूल गई।

पंचम : भूल जाय। मैं तो नहीं भूला।

राजा : गंगा ने कभी एक चिट्ठी–पत्री भी नहीं भेजी।

पंचम : असली तार तो भीतर से जुड़ा है।

राजा : अगर मैं तुझे छूट्टी न दूँ तो ?

पंचम : भाग जाऊँगा।

राजा : कैद में डाल दूँ तो ?

पंचम : पंछी बनकर उड़ जाऊँगा।

राजा : पंछी के पिंजड़े में डाल दूँ तो ?

पंचम : पिंजरा सहित उड़ जाऊँगा।

राजा : अच्छा !

पंचम : बहुत अच्छा।

सिपाही : जी सरकार !

राजा : इसे जेलखाने में डाल दो।

सिपाही : यह तो पंचम चौकीदार है।

राजा : बड़ा मक्कार है।

सिपाही : होगा, जरूर होगा।

राजा : गद्दार है।

सिपाही : यह तो बड़ा होशियार है।

राजा : चुप रह !

(सिपाही पंचम को ले जाता है। पंचम उसके हाथ जोड़ता है। कुछ रुपये देना चाहता है। सिपाही उसे ले जाता है। पंछी जेल का घेरा बन जाते हैं। पंचम बीच में बन्द हो जाता हैं। पंचम बीच में बन्द हो जाता है। सिपाही लाठी पीटता हुआ पहरा देने लगता है। राजा चला जाता है।

पंछी गाते हैं–)

जमी बरखै आसमान भीजै
जे उल्टा राज चलाइए जी।

सिपाही : तो हम का कर ?

सब : बिन बातिन दीया जलाइए जी।
बेरंगी रंग दिखाइए जी।

जे उल्टा राज चलाइए जी

तो बिन बातिन दीया जलाइए जी।

बेरंगी रंग दिखाइए जी।

दूसरा दृश्य

(गंगा बैठी है। राजा आता है।)

राजा : अरे गंगा ! तू यहाँ बैठी क्या कर रही है ?

गंगा : मेरा पंचम कहाँ है ?

राजा : उसने कभी कोई चिट्ठी–पत्री नहीं भेजी ?

गंगा : वह कहाँ है ?

राजा : कोई संदेसा भी नहीं ?

गंगा : मेरा पंचम कहाँ है ?

राजा : अब तू अकेली यहाँ क्या करेगी ? चल तुझे राजमहल ले चलता हूँ।

गंगा : नहीं, वहाँ से कोई लौटता नहीं।

राजा : तुझे सोने की पालकी पै बिठाकर ले चलूँगा। और जब तू कहेगी मैं यहाँ तुझे खुद लौटाने आ जाऊँगा।

गंगा : सच ?

राजा : हाँ, सच !

मसखरा : अब देखो तमाशा। पानी में लगावै आग यही है इसका भाग।

गंगा : (अचानक) पर मेरा पंचम कहाँ है ?

राजा : अरे भूल जा पंचम को जब वह मुझे भूल गया।

गंगा : मुझे भूल गया ?

राजा : कभी खोज–खबर नहीं ली।

गंगा : मैंने उसके पास इतनी चिट्ठियाँ भेजीं।

राजा : पता नहीं। उसे एक भी नहीं मिली।

गंगा : ऐसे कैसे हो सकता है।

राजा : हुआ है।

गंगा : मैंने अभी देखा, वह अँधेरे में खड़ा है। राजा, तुम अँधेरे में खड़े हो। वह बँधा हुआ है। वह बन्द है। जिसने उसे बनाया बन्दी, वही बन्दी–गृह में है। सूरज–किरन जब किसी एक जगह पड़े तो वहाँ आग लग जाती है। चारों तरफ फैलने में वही धूप हो जाती है।

मसखरा : अरे रे रे, यह तो जागकर भी सपने देखती है।

राजा : गंगा ! क्या बक रही है ?

गंगा : जो राजा था, जो अपराध के हिसाब से दंड देता था, जो अपने से दूसरे को बाँटकर नहीं देखता था, जो त्याग के लिए राजगद्दी पर बैठता था, मैं उसी की प्रजा हूँ। मैं उसी राजा की प्रजा हूँ।

(गंगा दौड़ती है। राजा बढ़कर अँधेरे में खड़ा सोचता रह जाता है।)

राजा : यह क्या कह रही है ? मैं इसे बेवकूफ समझता था.....।

मसखरा : सबको बेवकूफ समझे तभी तो खुद बेवकूफ बन गए !

तीसरा दृश्य

(बंदी–गृह में पंचम खड़ा है। रानी आती है।)

रानी : जो कभी अपने–आप में नहीं बँधा, उसे कौन बना सकता है बंदी ? क्या है बंदी जीवन, इसे बनाने वाला कौन है जो, इतना भी नहीं जानता, उसे कारागार में कौन डाल सकता है ? पंचम !

पंचम : महारानी !

रानी : जिसने दूसरे को बाँधकर रखना चाहा है, यह बंदी गृह उसी का निर्माण है। वह स्वयं इसमें कैद है। इसमें रानी कैद है। राजा प्रभुत्व का डंडा लिए बाहर पहरा दे रहा है। इस कारागार में तुझे बंदी बनाकर नहीं रखा जा सकता !

सिपाही : महारानी, आप राजभवन में खुद बंदी हैं। बंदी बंदी को नहीं मुक्त कर सकता।

रानी : कारागार को बंदी जानता है। यह बंदी नहीं है।

पंचम : महारानी !

रानी : यह मुक्त है। इले कोई बंदी नहीं बना सकता।

(रानी दरवाजा खोलना चाहती है।)

पंचम : राजा कोप करेंगे।

रानी : करेंगे।

पंचम : राजा अपना दिया हुआ हुक्म वापस ले लेंगे।

रानी : मैं किसी के दान से जीवित नहीं रहना चाहती।

(रानी दरवाजा खोल देती है। पंचम बाहर आकर रानी का चरण स्पर्श करता है।)

चौथा दृश्य

(गंगा गाँव की दो स्त्रियों से घिरी बैठी है।

सब गा रही हैं–)

पुरुब से आई रेलिया पछिम से जहजवा

पिया कैं लादि लेइगैना।

रेलिया होइगै मोर सवतिया पिया कै लादी लैगे हो

रेलिया न बैरी जहजिया न बैरी

उहै पइसवा बैरी हो

देसवा देसवा भरमावै उहै पइसवा बैरी हो।

प0 स्त्री : राजा के साथ चली जा।

दू0 स्त्री : रानी बन जाएगी।

प0 स्त्री : राजा सोने की पालकी पर बिठाकर ले जाएगा।

दू0 स्त्री : पंचम अब नहीं लौटेगा।

प0 स्त्री : पुरुष बड़े बेईमान होते हैं।

गुगा : स्त्री कोई कम है। मैंने ही जिद करके पंचम को परदेस भेजा। मैं न राजा के दरबार में गई होती, न पंचम से बिछुड़ती। मैंने ही पीली साड़ी माँगी। अँगूठी गढ़ाने को मैंने ही कहा।

प0 स्त्री : तेरे तो करम फूटे हैं।

दू0 स्त्री : तेरी तो मति मारी गई।

प0 स्त्री : अरे रानी बनेगी।

गंगा : जो रानी होती है उसके एक राजा होता है। और जो राजा होता है उसकी एक रानी होती है।

मसखरा : बहुत सही बात कही है। और सही बात यह कि राजा को न रानी पर विश्वास, न रानी को राजा पर।

(पृष्ठभूमि से पंचम की पुकार आती है।)

पंचम : (पुकार) गंगा ! ओ री गंगा !

(गंगा उन दोनों औरतों से अपना हाथ छुड़ाकर बढती है।)

गंगा : पंचम ! मेरा पंचम !

प0 स्त्री : (पकड़ती है) यह तो सपने देखती है।

दू0 स्त्री : (खींचती है) इसका दिमाग फिर गया है।

(पंचम की पुकार नजदीक आती है।)

प0 स्त्री : अरे चल, ओझा के पास ले चलूँ।

दू0 स्त्री : चल, राजा के पास ले चलूँ।

(पंचम आता है। पंछी गाते है–)

सैयाँ मोर गइलैं राजा पुरबी बनीजियाँ

सो लैहो अइलैं ना

रस बेंदुली टिकुलिया सो लैहो अइलैं ना।

टिकुली पहिनि घनि बैठी ओसरवाँ

सो चमचम चमके ना

मोरे सैंया कै टिकुलिया हाँ चमके लागै ना।

(इस बीच पंचम ने गठरी खोलकर गंगा को टिकुली
और मुँह देखने का शीशा दिया है। गंगा माथे पर टिकुली
लगाकर अपने को देखने लगी है।)

गंगा : अब बोलो, अब तक कहाँ थे ?

पंचम : सीधे परदेस से चला आ रहा हूँ।

गंगा : जब से गए, मेरी खोज–खबर ली ?

पंचम : चिट्ठी भेजी। जो भी मुसाफिर इधर आ रहा था उसके हाथ संदेसा भिजवाया। तूने भी तो कोई चिट्ठी नहीं दी।

गंगा : हर मंगलवार को चिट्ठी अपने हाथ से लिखकर अपने हाथ से डाकिये को देती रही हूँ।

(मसखरा आता है।)

मसखरा : गोहार लागो गोहार, मेरी बीबी ने मेरी दाढ़ी नोच ली। बोलो अब मुझे कौन पहचानेगा ? अरे कुछ पानी पाथर दिया कि पट्ठे से लड़ने ही लगी।

गंगा : मैं इससे नहीं बोलती।

मसखरा : अरे इसकी तीनों मेहरियाँ किघर हैं ?

गंगा : बता, कहाँ है तेरी मेहरियाँ ?

(पंचम का डंडा लेकर गुस्से से पूछती है। उधर
मसखरा तान लगाता है–)

मसखरा : लंगड़ मचंगड़ के तीन मेहरी।

एक कूटै एक पीसै एक भाँग रगरी।।

पंचम : यह क्या तमाशा है ? कौन लंगड़ मचंगड़ ? किसकी तीन मेहरी ?

गंगा : तू है लंगड़ मचंगड़। तेरी तीन मेहरी।

(मसखरा पंचम को चलाकर देखता है। मसखरा
खुद लंगड़ा रहा है।)

मसखरा : अरे भइया, तुम बड़े ठीक समय पर आइ गए। ई तो सोने की पालकी पै बैठकर राजा के यहाँ जा रही थी !

पंचम : क्यों ?

गंगा : हाँ, जा रही थी क्यों न जाऊँ ?

पंचम : तेरी यह मजाल।

गंगा : मुझे आँख दिखाता है।

पंचम : औरत की जात टके–भर की औकात।

(मसखरा दोनों को लड़ा रहा है।)

मसखरा : और नहीं तो क्या।

गंगा : मैंने तेरी कमाई नहीं खाई।

पंचम : जबान बंद करती है या नहीं।

मसखरा : यही तो बात है। हाँ जी, यह भी कोई बात है।

गंगा : मैं तेरी बीबी नहीं जो तेरी बात सुनूँ।

मसखरा : बिलकुल सही बात। आल राइट। खूब कहा। और बोलो !

गंगा : बड़ा आया कमाई करके !

(पंचम बढ़कर गंगा के हाथ से डंडा छीन कर उसे
मारने लगता है। गोहार लगाता हुआ मसखरा भागता है।
गंगा चिल्लाती है–)

गंगा : बचाओ, बचाओ ! दुहाई राजा की। गोहार लागो राजा।

(राजा आता है। पीछे–पीछे मसखरा है।)

मसखरा : इसने उसको मारा। उसने इसको मारा। मारा उसको इसने। उसको इसने मारा।

(गंगा रो रही है। राजा पंचम को मारना शुरू करता है।
मसखरा भागता है। सहसा गंगा रोना बंद कर पंचम की लाठी से राजा को
पीटना शुरू करती है। नीलकंठ दौड़कर राजा को बचा लेता है।)

गंगा : इसे पुकारा था न्याय करने के लिए। मारा क्यों ? तुझे मारने का अधिकार किसने दिया ? तू राजा है। पर मारने वाला कौन है ? उसने मारा। मारने का उसका अधिकार है। वह प्रेम भी तो करता है। मारना ही हमारा प्रेम है। मैं इसके बिना नहीं रह सकती। यह मेरे बगैर नहीं रह सकता। हम लड़ते हैं। हम दो हैं। हम हैं।

(दूसरी ओर रानी दिखती है।)

रानी : पुरुष समझता है कि बस, वही मनुष्य है। उसी की इच्छा, उसी का प्रभुत्व मनुष्य का लक्ष्य है। नारी को वह इच्छानुसार स्वीकार कर सकता है या त्याग कर सकता है। पर यह नहीं जानता कि प्रकृति का त्याग पुरुष के लिए आत्महत्या के बराबर है।

(राजा आता है।)

रानी : तुम्हारे दान में अहंकार है। तुम्हारे दिये हुए जीवन से मैं घुट रही हूँ। अपने ही जीवन से जीना है। अपनी ही मृत्यु से मुक्त होना है। लो अपना दान वापस लो।

राजा : परिस्थिति सब कुछ नहीं बदल सकती। मैंने देखा, प्रेम त्याग, तपस्या है। अन्धकार है। विश्वासघात भी है। दोनों है। सम्बन्ध केवल बाहर से नहीं टिका है। रानी, मुझे क्षमा करो। तुम अपने ही जीवन से जी रही हो। तुम हो तभी मैं हूँ। विश्वास करो, मेरे अहंकार और भ्रम की सीमा नहीं थी। विश्वास को नष्ट कर मैं विश्वास की परीक्षा लेने चला था।

रानी : मेरे महाराजा ! आप मेरे लिए कान का मोती ढूँढ़ने गये थे।

राजा : गहरे सागर से ढूँढ़कर ले आया हूँ।

(रानी के कानों में पहनाने लगता है। उधर पंचम अपनी गठरी में से पीली साड़ी निकालकर गंगा के माथे पर फैलाता है। पंछी गाते हैं–)

ये दो सगुन पंछी
जीवन नदिया की धारा हैं।

(राजा–रानी आते हैं। रानी पीली साड़ी को गंगा के आँचल से बाँधती है। राजा उसका दूसरा पल्ला पंचम की कमर से बाँधता है।)

नीलकंठ : काटो तो बाढ़े नहीं बिनु काटे कुम्हिलाय।
ऐसी अद्‌भुत नारि का रहस कहा नहिं जाय।

सब : हम दो सगुन पंछी
जीवन नदिया की धारा हैं।

रानी : नदी किनारे धुआँ उठे रे मैं जानूँ कछु होय।
जाके कारन जनम गँवाया कहु ना जलता होय।।

सब : हम सब सगुन पंछी
जीवन नदिया रस धारा हैं।
हम दो सगुन पंछी
जीवन नदिया की धारा हैं।

नीलकंठ : प्रकृति पुरुष का धर्म
नारि को नर प्यारा है।

(सब एक साथ गाते हैं–)

हम दो सगुन पंछी.....

मसखरा : सबका आशीस है सबको प्रणाम है
खेल अब खतम है सबको राम राम है।

(सब गाते हैं। पर्दा गिरता है।

,,,,,

लक्ष्मीनारायण लाल

लक्ष्मीनारायण लाल का जन्म 4 मार्च, 1927 में उत्तर–प्रदेश के बस्ती जिले के एक गाँव जलालपुर में हुआ। प्रारम्भिक शिक्षा गाँव के स्कूल में और हाई स्कूल, इन्टरमीडियट शिक्षा बस्ती शहर में प्राप्त की। सन् 1950 में प्रयाग विश्वविद्यालय से हिन्दी में एम0 ए0 और 'हिन्दी कहानियों की शिल्पविधि' पर सन् 1952 में डाक्ट्रेट।

प्रयाग विश्वविद्यालय और दिल्ली विश्वविद्यालय के कॉलेजों में अध्यापक होकर विश्वविद्यालय की उच्चस्तरीय शिक्षा और अनुसंधान कार्यों में महत्त्वपूर्ण योग दिया। इस बीच कुछ दिनों के लिए आकाशवाणी में ड्रामा प्रोड्यूसर। सन् 1964 में विश्व नाटक सम्मेलन, रूमानिया में भारत वर्ष की ओर से अकेले नाटककार के रूप में प्रतिनिधित्व किया। 'नेशनल ग्रीक थियेटर', एथेन्स में आमंत्रित किये गये।

इलाहाबाद में नाट्य केन्द्र 'स्कूल ऑफ ड्रामेटिक आर्ट्स' की स्थापना और इनके द्वारा उसके संचालन और निर्देशन ने हिन्दी क्षेत्र में नाटक और रंग क्षेत्र के प्रति लोगों में गहरी रुचि पैदा की। अनेक अभिनेता, निर्देशक नाट्य केन्द्र से रंग–संस्कार और प्रशिक्षण लेकर हिन्दी रंग क्षेत्र में कार्यरत हुए।

दिल्ली में रंग संस्था 'संवाद' का निर्माण कर और दिल्ली विश्वविद्यालय में एम0 ए0 हिन्दी के पाठ्यक्रम में नाट्य और रंग का प्रशिक्षण और अध्यापन कर लाल ने राजधानी में गंभीर कार्य किया। अभी 1986 में लंदन, पेरिस और फ्रैंकफर्ट में पश्चिम के वर्तमान थियेटर को अंदर बाहर से देखकर तथा उनकी समूची कार्यपद्धति का अनुसंधान कर लौटे हैं।